भूतशुद्धि क्रिया द्वारा चेतना का विकास पर आधारीत

(Only for Academic Students)

(केवल शालेय छात्रों के लिए)

अभिप्राय

मला भूतशुध्दि क्रियेमुळे जे मला शक्य वाटत नव्हते ते तर शक्य झालेच आणि माझा आत्मविश्वाससुध्दा इतका वाढला कि मला कोणतीही गोष्ट सोपी वाटत आहे व ती ही बिनधास्त करु शकते. मी पॉलिटेक्निकला अगोदर नापास झाली पण जेव्हा मी भूतशुध्दि क्रिया सुरु केली. सकारात्मक माझा निकाल कधी वाटत नव्हते की पास होईल पण मी प्रथमश्रेणी मध्ये पास झाली.

माझे शरीर हे संपूर्ण निरोगी झाले. भूतशुध्दि क्रिया सुरु करण्याच्या अगोदर फार आजारी रहायची की मला एका वेळेला ४ सलाईन घ्यावे लागत पण आता माझी तब्येत पूर्णपणे बरी झाली आहे. फक्त भुतशुध्दी क्रिये मुळेच हे शक्य झाले असे मी पूर्णपणे सिध्द करु शकते.

आपली विश्वासू
कु. करुणा अंबोरे

– अनुक्रमणिका –

१. भूमिका

महर्षी अरविन्द फाऊण्डेशन के संस्थापक श्री महर्षि अरविन्दजी के द्वारा दिव्य जीवन पथ की संकल्पना पर आधारित एक अद्भुत क्रिया भूतशुद्धिक्रिया (Spritual Body Purification process) का निर्माण किया गया है। जो सिद्ध परम्परा के अद्भुत एवं गुह्यतम् प्राणायाम तथा उच्च स्तरीय ध्यान-अभ्यास की प्रक्रियाओं का निचोड़ है। इस क्रिया में समाहित विभिन्न अभ्यास प्रक्रियाओं का महत्वपूर्ण उपयोगी परिणाम हमारी शारीरिक एवं मानसिक स्थिती पर होता है। इससे हमारे भीतर ऊर्जा का स्तर बढ़ने लगता है तथा वह हमारे भीतर स्थिर एवं सकारात्मक बुद्धि और स्वस्थ शरीर का निर्माण करवाती है।

भुतशुद्धिक्रिया चेतना के विकास की सरलतम् विधि है। भुतशुद्धि क्रिया सिद्धम योग परम्परा से आया पवित्र ज्ञान है। समस्या और परेशानी हर व्यक्ति के जीवन में आती है। लेकिन व्यक्ति जीवन भर यही समझता है कि कोई और उसके दुःख के लिए जिम्मेदार है। व्यक्ति की इस समझ को शास्त्र में माया, अविद्या के नाम से कहा गया है। भूतशुद्धिक्रिया अस्तित्वगत समस्याओं की जड़ को ही काट देती है। व्यक्ति काम, क्रोध, लोभ, मोह, घृणा, मत्सर, इन षड्विकारों को जानकर उससे उपर उठने लगता है। इससे उपर उठने पर जीवन सरल एवं सहज बन जाता है। इससे प्राथमिक स्तर के स्वास्थवर्धन की उपलब्धि के साथ-साथ शांत बुद्धि तथा संयमित चरित्र से भरे जीवन का भी विकास होता है। व्यक्ति की ऊर्जा सकारात्मक एवं सृजनात्मक दिशा में विकसित होती है। यह भूतशुद्धिक्रिया हमारे दैनिक जीवन का बहुत आसानी से हिस्सा बन जाता है, इससे हम दिन भर ऊर्जावान रहकर अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते रहते हैं। इससे हमारा संसार भी सुन्दर बनने लगता है।

अपने जीवन में रोजमर्रा की भाग-दौड़ खींचतान से हम तनाव से भर जाते हैं। धीरे-धीरे यह तनाव शरीरिक रोगों के रूप में सामने आता है। वैसे तो नींद से हमें थोड़ी बहुत दिव्य ऊर्जा (Divine Energy) मिलती है, परन्तु यह ऊर्जा जीवनी शक्ति के स्तर को बनाये रखने के लिए पर्याप्त नहीं है। हमारी चेतना के स्तर के अनुसार ही हमें दिव्य ब्रह्माण्डीय ऊर्जा प्राप्त होती है। शांत मन अधिक दिव्य ऊर्जा को ग्रहण करता है। जब हम सकारात्मक सोचते हैं तो ऊर्जा का शरीर में संचार होता है। भूतशुद्धिक्रिया हमारे शरीर के नाड़ी संस्थान इत्यादि

को शुद्ध करके दिव्य ऊर्जा के प्रवाह को सुनिश्चित करती है। शरीर, मन, बुद्धि को स्थिर करके ध्यान को प्रगट करती है, इसके निरन्तर अभ्यास से चेतना के स्तर का क्रमशः विकास होता है। चेतना के विकास से हमे इंद्रियातीत एवं भावातीत अनुभूतियाँ प्राप्त होती हैं । ऐसी अनुभूतियाँ हमारे ज्ञान के दरवाजों को खोलती हैं। ज्ञान हमें हमारे अस्तित्व की पहचान कराता है। अपनी पहचान होने के बाद व्यक्ति आनंद से भर जाता है। अतः भूतशुद्धिक्रिया उच्चतम् चेतना तक पहुँचने का सरलतम् माध्यम है।

२. विश्व स्वास्थ्य संगठन

(WORLD HEALTH ORGANISATION [WHO])

ने सफल जीवन के सूत्र (Life Skills) दिये हैं।

१) स्वयं की पहचान : स्वयं की पहचान होना, स्वयं की क्षमताओं, पसन्द, नापसन्द इन मुल्यों का ज्ञान होना, व्यक्ति को जीवन में सफल बनाता है। जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए मनुष्य को स्वज्ञान (स्वयं का ज्ञान) होना आवश्यक है।

२) सहानुभूती : सफल जीवन के लिए अन्य लोगों की तरफ देखने का नजरिया समान होना चाहिए। धर्म, वंश, जाति, संप्रदाय आदि का भेदभाव नहीं होना चाहिए।

३) समस्याओंका निराकरण : जीवन में सफल होने के लिए, जीवन में निर्माण होने वाली समस्याओं को व्यक्ति को स्वयं सुलझाना चाहिए। समस्याओं का निराकरण होने पर जीवन में सफल हो सकते हैं।

४) निर्णय क्षमता : प्रश्न के हल खोजते समय उस विषय में उपलब्ध पर्यायों और साधनों को खोजना चाहिए, जिससे कि सही और सटीक उपचार और साधन का उपयोग कर हम सही निर्णय लेने में सक्षम हो सकते हैं। निर्णय करना सफल जीवन का सूत्र है।

५) सम्बन्धों में सहानुभुती : हमें हमेशा ही दूसरों में दुर्गुण ही नहीं देखना चाहिए। उनके सद्गुण देखकर एक दूसरे के प्रति सहानुभूतीपूर्वक आचरण करना चाहिए।

६) सृजनात्मक विचारधारा : दूसरों को समझ में आये और दूसरों को

पसन्द आये, ऐसा कर्म व्यक्ति का होना चाहिए, जिससे वह सफल जीवन जी सकता है।

७) सटीक सम्प्रेषण : स्वयं के विचार, ज्ञान और भावनाओं को सहजता से और आसान भाषा में दूसरों तक पहुँचाना ही सफल जीवन है।

८) चिकित्सक विचार : परम्पराओं और रुढ़ियो से चलती आ रही विचारधारा से हटकर नयी सृजनात्मक विचार करने की क्षमता व्यक्ति को जीवन में सफल बनाती है।

९) भावनाओं का संतुलन : हमारे इर्दगिर्द होने वाली घटनाओं और वातावरण से हममें अनेक तरह की भावनायें प्रगट होती हैं। लेकिन किस भावना को कितना महत्व दिया जाए, यह व्यक्ति को समझना चाहिए।

१०) तनावों का संतुलन : आधुनिक युग में जीवन जीते समय अनेक तरह के तनावों से हमें गुजरना पड़ता है। इन तनावों में संतुलन निर्माण करने से जीवन सफल होता है।

जागतिक स्वास्थ्य संगठन द्वारा सफल जीवन के यह दस सूत्र दिये गये हैं। **"भूतशुद्धिक्रिया" द्वारा इन सूत्रों को जीवन में यथारुप में निर्माण करने के लिए शारीरिक, मानसिक एवं चेतना के स्तर पर विकसित होकर व्यक्ति सफल जीवन बना सकता है।**

"महर्षि अरविन्द फाऊण्डेशन" द्वारा यह 'भूतशुद्धिक्रिया' जनकल्याण हेतु सिखायी जाती है। जिससे व्यक्ति सफल जीवन के सूत्रों को अपने जीवन में उतार सकता है। (भू.द्वा.चे.वि. 'भूमिका')

३. "दिव्य जीवन पथ" (PATH OF DIVINE LIFE)

(Home page mater Web site : www pathofdivinelife.org)

"दिव्य जीवन पथ" चेतना के विकास का एक सरल एवं प्रभावशाली मार्ग है। यह मार्ग व्यक्ति को उच्चतर दिव्य ऊर्जा स्तरों से जोड़ देता है। इस राह पर व्यक्ति सुखी और शांतिपूर्ण जीवन जीने की कला सीखता है और "सारा विश्व एक परिवार" होने का अनुभव करता है। यह पथ हमें जीवन परिवर्तन की ऐसी तकनीकें प्रदान करता है जिनके माध्यम से व्यक्ति सत्य के ज्ञानपर आधारित व्यक्तिगत चेतना के विकास के लिए सक्षम प्रयोग कर सकता है। व्यक्ति की चेतना के विकसित होने पर वह सकारात्मक सोच के माध्यम से जीवन की

चुनौतियों को सहजता से मात दे सकता है तथा स्वाभाविक रुप से सारी मानवजाति के प्रति निरपेक्ष प्रेमभाव रखना आरम्भ करता है।

चित्र क्र. १



साधारणतः उचित ज्ञान और मार्गदर्शन की कमी के कारण, जीवन की शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक आयामों से सम्बन्धित समस्याओं का समाधान खोजने हेतु, व्यक्ति बाहरी दुनिया में वस्तुओं का पीछा करता है। परिणामस्वरुप, चित्र १ में दिखाये अनुसार विक्षुब्ध परिवार, विभाजित समाज और विघटित राष्ट्र दिखाई देता है। "दिव्य जीवन पथ" हमे सकारात्मक सोच देकर हमारे भीतर निरपेक्ष प्रेमभाव को स्फुरित करता है और हमें आत्मनिर्भर होने में मदद करता है। यह समस्याओं को सुलझाने और जीवन में शांति और आनंद प्राप्त करने के लिए सक्षम बनाता है। निरपेक्ष प्रेमभाव का विकास ही "वसुधैव कुटुंबकम्" के रुप में फैलता है।

"दिव्य जीवन पथ" का दृष्टिकोण व्यक्ति की विवेकबुद्धि को जगाना तथा उसकी चेतना को विकसित करना है, क्यों कि एक व्यक्ति ही "सारा विश्व एक परिवार" की संकल्पना की सबसे छोटी इकाई है। इसिलिए, स्वयं के परिशोधन और विकास से ही इस आंदोलन की शुरुआत की गयी है।

वर्तमान स्थिति और जीवन की चुनौतियाँ

चित्र १ में दिखाई हुई अधिकांश समस्याएं और परिस्थितियाँ वास्तव मे

हमारा अपने आपको जानने, समझने, विकास करने तथा अपने अस्तित्व को सिद्ध करने का प्रयास दर्शाती है, क्योंकि इन्हीं बातों का ज्ञान व्यक्ति को शांति एवं खुशी का अनुभव करा सकता है। इनके अलावा व्यक्ति के पास कोई उपाय नहीं है। "मैं कौन हूँ?" और "मेरे जीवन का लक्ष्य क्या है"? यह बहुत ही मौलिक सवाल है क्योंकि यही सवाल हमारे जीवन में हमें चारो ओर नचाते रहते हैं। अधिकांश लोग संतोषजनक जवाब के बिना ही मर जाते हैं। आइए इन सवालों पर संक्षिप्त विश्लेषण करते हैं।

मैं कौन हूँ?

मुनष्य को हजारों साल से ही प्राकृतिक रुप से स्वयं के बारे में प्रश्न उपस्थित रहा है कि, मैं कौन हूँ? और आज भी यह मनुष्य से संबद्ध है, सामान्य तौर पर इस सवाल का जवाब परिवार का नाम, व्यवसाय, धर्म, जाति, राष्ट्रीयता, आदि के रुप में आता है। परंतु यह सिर्फ "शरीर" के बारे में जानकारी हैं या स्वयं के गुण हैं और यह सब परिवर्तन के अधीन हैं। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो यह सब अस्थायी हैं। इसिलिए अंत में यह एक सवाल बना ही रहता है कि "मैं कौन हूँ?"

"दिव्य जीवन पथ" का लक्ष्य

दिव्य जीवन पथ इसमें 'पथ' का अर्थ है 'रास्ता' ऐसे जीवन का रास्ता जहाँ सुख समाधान और शांति है। एकाग्रतासे कार्य चलता है। इसी पथ से चलने वाले व्यक्ति के पैर की पूजा होती है। व्यक्ति नहीं, उसके चलने का मार्ग आदर्श होता है। ऐसे आदर्श पथ से चलना, इसीका अर्थ है 'दिव्य जीवन पथ' जिसमें जाति, पंथ, लिंग, धर्म, राष्ट्रीयता, स्त्री-पुरुष, ऊंच-नीच किसी प्रकार का भेद नहीं है। हर कोई व्यक्ति अपने जीवन के भौतिक, वित्तीय, सामाजिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक जैसे अनेक आयामों की गुणवत्ता में जल्दी और आकस्मिक रुप से सुधार चाहता है। हम सफल जीवन व्यतीत करने के लिए केवल अच्छी नौकरी, पति, पत्नी, संपत्ति, आदि इन बाह्य वस्तुओं को ही आंतरिक चेतना के विकास की अपेक्षा विशेष महत्वपूर्ण मानकर उनकी चाहत रखते हैं। उन्हें प्राप्त करने के लिए हम कठिनतम् प्रयास भी करते हैं, परन्तु इस प्रक्रिया में, अनजाने में ही हम लालच, का जाल बुनते हैं और अंत में उसीमें उलझकर रह जाते हैं।

इन सबसे निर्मित हुई कभी खत्म न होनेवाली बाह्य सफलता कि इच्छा हमें प्रकृति से तो दूर ले ही जाती है, बल्कि साथ ही साथ हमारी आंतरिक स्थिति को भी विक्षुब्ध कर देती है। यह स्थिति हमारे भीतर अहंकार, स्वार्थ, अधिकार, आदि प्रवृतियों को जन्म देकर अंत में हमे विभिन्न प्रकार के तनावों से भर देती है। इसके परिणाम में हमें व्यथित पारिवारिक जीवन, विभक्त सामाजिक स्थिति और विघटित राष्ट्र का स्वरुप दिखाई देता है। इसिलिए सफल जीवन प्राप्ति हेतु जीवन के लक्ष्य निर्धारण के बारे में फिर से एक बार चिंतन करते हुऐ जीवन की उक्त चुनौतियों के साथ–साथ चेतना के विकास का महत्व समझना बहुत जरुरी है।

"सारा विश्व एक परिवार" की स्थापना करना या एक ऐसे "हिन्दराष्ट्र" का निर्माण करना कि जिस में प्रेम तथा मानवता की कोई भी भौगोलिक सीमा ना हो, यही दिव्य जीवनपथ का लक्ष्य है। चेतना के विकास के माध्यम से ही यह सम्भव होता है। और यह विकास सकारात्मक सोच और निरपेक्ष प्रेमभाव रखने से होता है। विकसित चेतना पर आधारित व्यक्ति या परिवार ही शांतिपूर्ण समाज का निर्माण करता है जिससे स्वाभाविक रुप से ही "हिन्दराष्ट्र" या "सारा विश्व एक परिवार" का गठन होता है।

"दिव्य जीवन पथ" जाति, पंथ, लिंग, राष्ट्रीयता और धर्म के आधार पर भेद नहीं करता। यह एक सर्वसमावेशक प्रेम आंदोलन है, जो उन सभी का स्वागत करता है, जो सत्य और मानवधर्म के पथ पर चलने के लिए तैयार हैं। इसिलिए आंतरिक या वास्तविक सत्य का पता लगाने और मानवधर्म के पथ पर चलने के लिए तैयार हैं। इसिलिए आंतरिक या वास्तविक सत्य का पता लगाने और उसका अनुभव करने के लिए, सूक्ष्मशरीर शिक्षा कार्यक्रम सभी के लिए खुला है। अब ! यह हम पर निर्भर है कि हम ज्ञात से अज्ञात की ओर जाने के लिए तैयार है या नही।

जीवन की चुनौतियों को हल करने के लिए चेतना विकास

जीवन की चुनौतियों को हल करने के लिए, एक समग्र दृष्टिकोण की जरुरत है। सुख–शांति के लिए किये जाने वाले वर्तमान आचरण (उदा. बाहर घूमने के लिए छुट्टी निकालना, आदि) से हमें कभी–कभी खुशी महसूस होती है, लेकिन जब दुःख आता है तो हम अस्थिर होते हैं। स्थायी शांति और खुशी के

लिए समस्या की अधिक से अधिक समझने की जरुरत है।

अगर हम परीक्षण करें तो हमारे शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक आयामों में उत्पन्न समस्याएँ जीवन मे शांति, खुशी और प्रेम प्राप्त करने की जरुरत को दर्शाती हैं। इन्हे स्थायी रखने के लिए हमारे मन को सकारात्मक बनाने की ओर केन्द्रित रखना बहुत जरूरी है। आमतौर पर देखा जाय तो यह मन कई दिशाओं में बिखरा हुआ और कई वस्तुओं को एकसाथ प्राप्त करने की चेष्टा में लगा होता है। मन की यह स्थिति नकारात्मकता को दर्शाती है। इस तरह का सकारात्मक मन सकारात्मक विचारों को उत्पन्न करता है और अन्य सकारात्मक ऊर्जा को आकर्षित करता है परिणामस्वरुप, व्यक्ति के जीवन में निरपेक्ष प्रेमभाव (Unconditional Love) के फू ल विकसित होते हैं। तनावपूर्ण नकारात्मक या निराशाजनक विचारों से मन का रुपांतरण होकर सकारात्मक विचारों एवं एकाग्रता की स्थिति के रुप मे बदल जाना तथा इससे निरपेक्ष प्रेमभाव का विकास होना ही चेतना के विकास की निशानी है। इस तरह मन की निचली अवस्था से उच्च अवस्था में या नकारात्मक ऊर्जा से सकारात्मक ऊर्जा में परिवर्तन होना ही दिव्य ऊर्जा का संक्रमण है। विकसित चेतना या मन के पास प्रचुर मात्रा में सकारात्मक ऊर्जा होती है, जो हर व्यक्ति को जीवन की चुनौतियों को स्वीकार करने के लिए सक्षम तो बनाती ही है, लेकिन साथही साथ जीवन को अधिक से अधिक बेहतर बनाने के लिए भी योगदान देते हुये वह अभिव्यक्त करती है। निम्नलिखित चित्र नं. २ आपको बताता है कि परमाणु कणों में मौजूद ऊर्जा ही ब्रह्माण्ड में कैसे मौजूद है और ऊर्जा के विभिन्न रुप एक दूसरे के साथ कैसे जुड़े हैं ?

यह साबित हो गया है कि सभी चलित या अचलित वस्तुएँ टूटकर जब उनके मूल रुप में जाती है तो शुद्ध ऊर्जा ही मिलती है। जिस तरह अथाह सागर में पानी की एक बूँद होती है उसी तरह हम उस “अनंत” कॉस्मिक ऊर्जा के क्षेत्र में एक बूँद जैसे है।

हमारा हर कार्य मन और पदार्थ के परस्पर व्यवहार का परिणाम है। मन क्या है? मन विचारों का संग्रह है। सकारात्मक या नकारात्मक विचार, दोनों ऊर्जा के सूक्ष्म रुप हैं जिसका हम पर या हमारी चेतना पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

सूक्ष्म स्तर के ऊर्जा–विज्ञान को समझने के लिए सूक्ष्मशरीर के प्रशिक्षण

विभिन्न अभ्यासों में किए जानेवाले सत्य के आधार के प्रयोग हमारी मदद करते हैं। आंतरिक अभियांत्रिकी का या आंतरिक विज्ञान का अभ्यासक्रम ही सूक्ष्म शरीर का प्रशिक्षण है। सकारात्मक सोच को विकसित करने, नकारात्मक ऊर्जा को दूर भगाने और उच्च स्तर से सकारात्मक ऊर्जा के प्रवाह को बढ़ाने के लिए हमें इन अद्वितीय तकनीकों की जरुरत होती है। यह हमारी शारीरिक और मानसिक स्थिति पर महत्वपूर्ण प्रभाव बनाती है। यह तकनीक सिद्धम्योग परंपरा से आयी है। प्राचीन ज्ञान की श्रेष्ठतम् जीवन जीने की पद्धति को ही विभिन्न अभ्यास श्रेणियों में विभाजित कर सूक्ष्म शरीर प्रशिक्षण कार्यक्रम के अंतर्गत सिखाया जाता है।

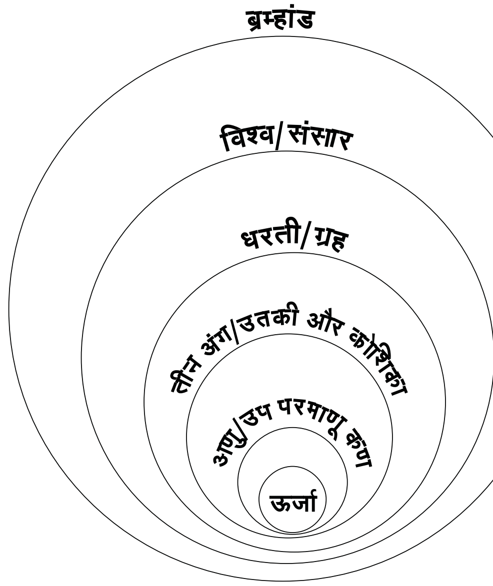
चेतना के विकास के लिए ज्ञान आधारित प्रयोग

मन का निचली अवस्था से उच्च अवस्था तक संक्रमण या मन की नकारात्मक स्थिति से सकारात्मक स्थिति में ऊर्जात्मक परिवर्तन की क्रिया यानि चेतना के विकास को (प्रत्येक के जीवन में) सुनिश्चित करने के लिए "दिव्य जीवन पथ" में आधुनिक विज्ञान को प्राचीन ज्ञान के साथ मिश्रित किया है। परिणामतः सूक्ष्मशरीर प्रशिक्षण **(Astral Body Education)** पद्धति का विकास किया गया है, जो अनिवार्य रुप से सत्य के ज्ञानपर आधारित है। यह दिव्य प्रयोग समग्र रुप से शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक स्तर पर कार्य करता है। ऊर्जा के परिवर्तन का सिद्धांत यहाँ कार्य करता है। ऊर्जा के सिद्धान्त का यह खेल जिसकी समझ में आता है वही, चमत्कार के रुप में दिखनेवाले जीवन के घटनाक्रम को समझ सकता है।

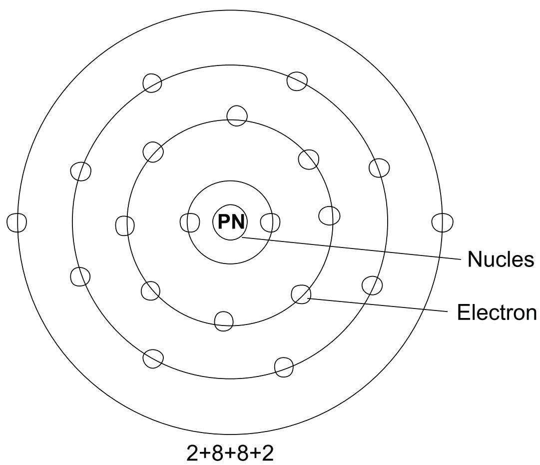
इस जगत में ऊर्जा का अस्तित्व हर जगह है और सब कुछ ऊर्जा ही है। यह सर्वज्ञात है कि पूरा ब्रह्माण्ड एक विशाल ऊर्जा क्षेत्र है, जिसमें ऊर्जा अलग-अलग रुपों में प्रकट होती है। इस विश्व में मौजूद सबसे छोटी एकाई से बड़ी ईकाई तक एवं पूरे ब्रह्माण्ड से छोटे से जीव तक केवल और केवल ऊर्जा का रुप ही है।

अणु/उपपरमाणु कण

अणु के भीतर इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन और न्यूट्रॉन होता है। न्युट्रॉन अणु के केन्द्र में स्थित होता है और यही ऊर्जा का स्त्रोत होता है। न्यूट्रॉन के विभाजन से परमाणु से



प्रचण्ड कण होते हैं, जो कण (परमाणु) के केन्द्र में न्यूट्रॉन के साथ जुड़े रहते हैं। यह धन प्रभावी प्रोट्रॉन, ऋण प्रभारी इलेक्ट्रॉन का अणु के साथ जोड़े रहने में मदद करता है। अणु (परमाणु) के केन्द्र के भीतर ऊर्जा का भंडार होता है। परमाणु का बिखडंन या सम्मिलन द्वारा जो ऊर्जा तैयार होती है उसे नाभि उर्जा या न्युक्लियर एनर्जी कहते हैं।

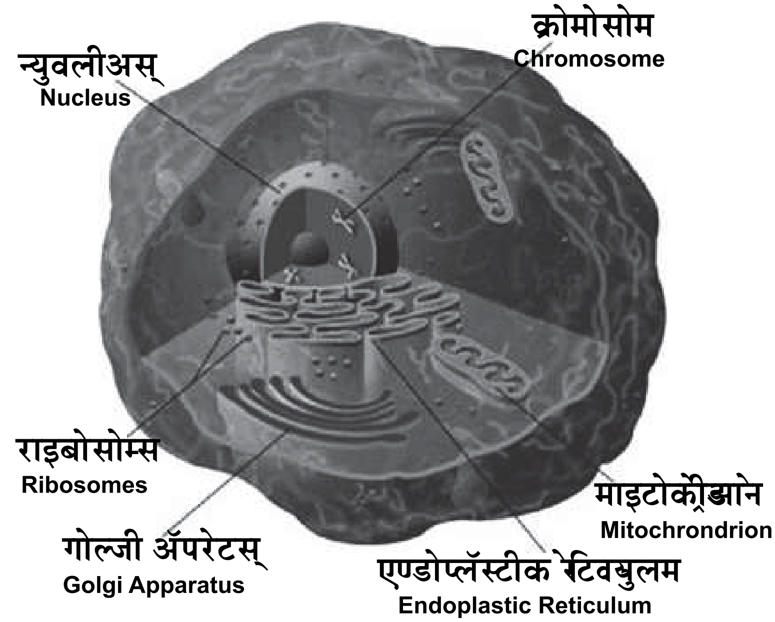


2+8+8+2
Calcium Atom

जैसे कॅलशिअम के अणु के भीतर प्रथम कक्षा में २, दूसरी कक्षा में ८, तीसरी कक्षा में ८ और चौथी कक्षा में २ इलेक्ट्रॉन प्रभावी होते हैं।

जीव/अंग/उतकों और कोशिकाएं

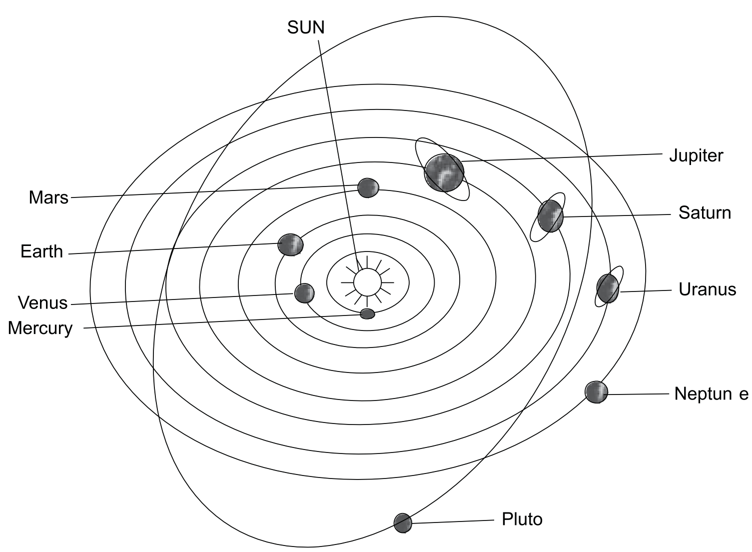
मानव शरीर की रचना बहुत जटिल है। शरीर की आंतरिक संरचना बहुत ज्यादा सुसंघटित है। प्रकृति ने बड़ी सूक्ष्मता से इसकी एक एक कोशिका, कार्य और संरचना प्रणाली का निर्माण किया है। जैसे पदार्थ का सबसे छोटा कण (परमाणु) अणु कहलाता है। उसी प्रकार शरीर की सबसे छोटी इकाई कोशिका होती है। कोशिका के अन्दर उसके कई छोटे-छोटे अंग, अवयव होते हैं। कोशिकाएँ अपनी कार्य एवं सरंचना के अनुसार कई प्रकार की होती हैं, एक प्रकार की कई कोशिकाएँ मिलकर ऊतक का



निर्माण करती हैं। एक प्रकार के कई ऊतक मिलकर अंग का निर्माण करते हैं। एक प्रकार के कार्यप्रणाली के अंग मिलकर एक तंत्र बनाते हैं, जैसे पाचन तन्त्र, अस्थि तंत्र, श्वसन तंत्र इत्यादि अलग-अलग प्रकार के कोषों को मिलकर शरीर बनता है।

धरति / ग्रह

हमारी धरती (पृथ्वी) सूर्य माला का एक ग्रह है। हमारी सूर्यमाला में सूर्य मूल्यवान है। और सूर्य को केन्द्र मानकर सभी ग्रह उसकी परिक्रमा करते हैं। जैसे कि अणु, की रचना में हमने देखा है।



हमारी सूर्यमाला में बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, गुरु, शनि, यूरेनस नेप्च्यून, प्लूटो यह ग्रह हैं और सूर्य तारा यह मिलकर सूर्यमाला बनी है। ऐसी कई सूर्यमालाएँ मिलकर एक आकाशगंगा बनती है।

ऐसी कई आकाशगंगाओं से मिलकर विश्व/संसार बना है। और इस सभी के विस्तार को हम ब्रह्माण्ड कहते है।

पूरे विश्व/ब्रह्माण्ड की बड़ी या छोटी वस्तु जो सजीव हो या निर्जीव, धन हो या द्रव या वायुरुप सभी वस्तुएँ या जीव अणु/कोशिका से बनी हैं और अणु के भीतर इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन और न्युट्रॉन होते हैं।

४. श्वास

सामान्य रुप से हम एक घण्टे में ९०० बार श्वास लेते और छोड़ते हैं। और २४ घण्टे में २१,६०० बार श्वास लेते और छोड़ते हैं। हमें स्वयं के भीतर के असीम जगत का साक्षात्कार कराने का श्वास एक सशक्त माध्यम है। श्वास हमारे जीवन का आधार है। यह हमें जीवन–उर्जा प्रदान करती है। इसी के माध्यम से योग एवं ध्यान के जगत में आसानी से प्रवेश प्राप्त होता है। हम ध्यान करने के लिए एकाग्रता पर जोर देते हैं। परन्तु श्वासों पर जागरुकता करने पर ध्यान स्वतः घटित होने लगता है।

हमारी श्वास मन को और शरीर को प्रभावित करती है। श्वास की अनियमित गति ही विभिन्न प्रकार की लहरों, कम्पनों एवं विचलनों का निर्माण करती है। मन में अस्थिरता और बेचैनी इसी कारण रहती है कि हम सही तरीके से श्वास लेना और छोड़ना नहीं जानते हैं। हम धीरे–धीरे सतत् अभ्यास से श्वास के सहारे मन पर सम्पूर्ण अधिकार कर सकते हैं। मन की ऊर्जा तथा शक्ति का विधेयात्मक एवं सृजनात्मक उपयोग कर मन को शांत कर सकते हैं। मन को स्थिर कर सकते हैं।

जीवन की पहली श्वास बहुत अद्‌भुत घटना होती है। जब कोई शिशु गर्भ में होता है, तो उसकी श्वसन प्रक्रिया नहीं चलती है। वह जन्म लेने के कुछ क्षणों बाद पहली लम्बी–गहरी श्वास लेता है। और इस श्वास के द्वारा ही प्राण पूरे शरीर में सुचारु रुप से फैल जाता है। फिर वह पूरा जीवन भर श्वास प्रश्वास करता रहता है। अंत में एक दिन जीवन की अंतिम श्वास को बाहर छोड़ते हुये प्राण त्याग देता है। यदि हम जन्म–मरण की प्रक्रिया पर ध्यान दें, तो जब शिशु पहली श्वास लेता है तभी शिशु के शरीर एवं मन की समस्त क्रियाएँ सुचारु रुप से प्रारम्भ होती है। आखिरी श्वास को बाहर छोड़ते हुए ही व्यक्ति मरता है। श्वास बाहर निकलने के बाद शरीर की अन्तर्जैविक क्रियाएं बन्द हो जाती हैं और

शरीर का विघटन होना शुरु हो जाता है।

हमारी प्रत्येक अन्दर आती श्वास हमारे लिए ऊर्जा और नया जीवन लाती है। यह नये जन्म के जैसी घटना है। प्रत्येक बाहर जाती श्वास हमारे शरीर के विषम तत्वों को दूर ले जाती है। यह एक मृत्यु काही रुप है। अतः इस प्रत्येक श्वास-प्रश्वास को हमें अपना नया जन्म और मृत्यु ही मानकर चलना चाहिए। सन्त जन सदैव वर्तमान को महत्वपूर्ण बताते हैं। वे कहते है कि वर्तमान में प्रत्येक श्वास के साथ आते नये जीवन को धारण करो और निसर्ग का धन्यवाद देते हुए अपने जीवन के सभी कार्यों में लगे रहो। श्वास तो प्रत्येक जन्म में साथ रहती है। श्वास को समझकर हम जीवन और जीवन के रहस्यों को समझ सकते है। श्वास में ही जीवन, मृत्यु और समाधि का रहस्य छिपा है। अतः

- श्वास जब शरीर में गतिमान है तो 'जीवन' है।
- श्वास जब शरीर से टूट जाये तो 'मृत्यु' है ।
- श्वास जब शरीर में विलीन हो जाये तो 'समाधि' है।

अभी हमारे पास समय है हम जागरुक हैं। अपने जीवन की ओर वापस मुड़ें और जीवन को समझें (श्वासों के सहारे से)। कठोपनिषद् का भी वचन है "उत्तिष्ठ, जाग्रत, प्राप्य वरान्निबोधयत"। उठो ! जागो! और तब तक मत रुको जब तक लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाये।

५. शब्द प्राणायाम

शब्द प्राणायाम सिद्धम योग परम्परा से आया एक गुप्त एवम् पवित्र ज्ञान है। शब्द प्राणायाम एक विशेष प्राणायाम विधि है। यह बेहद सरल, सुगम तथा सतत अभ्यास की प्रक्रिया है।

शब्द प्राणायाम के स्वरुप के पूर्व, प्राणायाम का आरंभिक ज्ञान सहायक है। प्राणायाम श्वास लेने और छोड़ने की विशेष लयबद्ध प्रक्रिया होती है, जिसमें पूरक, कुम्भक एवं रेचक रुपी तीन अंग होते हैं।

पूरक में जब श्वास को अंदर भरें तो धीरे-धीरे श्वास लें, सहज अवस्था में श्वास रुकती है, जिसे कुम्भक कहते हैं। श्वास बाहर निकालने की प्रक्रिया को रेचक कहते हैं। रेचक का अर्थ है खाली करना या बाहर निकालना।

शब्द प्राणायाम गले से श्वास-प्रश्वास की कला है। सामान्यता से हम जो श्वास प्रश्वास करते हैं। उसमें किसी प्रकार की आवाज नहीं आती है। शब्द

प्राणायाम करते समय गले की श्वास नली को थोड़ा सा सिकोड़ लेते हैं। तब श्वास लेने–छोड़ने से गले में श्वास के घर्षण की स्थिति उत्पन्न होती है। इस घर्षण से एक विशेष प्रकार की ध्वनि निकलती हैं। इस ध्वनि के साथ श्वास–प्रश्वास करना ही शब्द प्राणायाम है।

शब्द प्राणायाम में हम श्वास गले से घर्षण करते हुऐ लेते हैं। इस प्राणायाम को करते समय कण्ठद्वार (glottis) को संकुचित किया जाता है। नाक से श्वास लेते समय गले में श्वास का घर्षण होता है।

शब्द प्राणायाम का अभ्यास हर समय (किसी भी वक्त) किया जा सकता है। उठते, बैठते, जागते, सोते हुए प्रत्येक गतिविधि में इसकी साधना सम्भव है। शब्द प्राणायाम में आवाज तथा घर्षण दोनों होने के कारण मन तथा इन्द्रियाँ आसानी से केन्द्रित हो जाती हैं।

शब्द प्राणायाम में शब्द की उत्पत्ति स्वरयंत्र (Larynx/voice box) से होती है।

जब हम शब्द प्राणायाम करते हैं तो अन्दर आती हुई श्वास सो ऽऽ और बाहर जाती श्वास हम ऽऽ प्रतीत होती है। सोहम का अर्थ होता है 'मैं वही हूँ।'

शब्द प्राणायाम द्वारा नाड़ी–संस्थानों का शुद्धिकरण होता है और मन शांत होता है। इस क्रिया द्वारा ऑक्सीजन की मात्रा बढती है और आत्मविश्वास (Confidence) बढ़ता है। मन की एकाग्रता बढ़ती है। विचारों में आमूलचूल परिवर्तन होता है।

६. जीवन ऊर्जा

वर्तमान समय के वैज्ञानिकों ने अनेक शोध करके कई वर्षों की मेहनत के बाद यह नियम दिया कि, ''ऊर्जा को न तो उत्पन्न किया जा सकता है और न ही नष्ट किया जा सकता है।'' ऊर्जा को रुपांतरित किया जा सकता है। जैसे विद्युत ऊर्जा से ऊष्मा, प्रकाश, ध्वनि, चुंबकीय तरंगें, यांत्रिक गति आदि अनेक रुपों में ऊर्जा प्राप्त करते हैं। उसी प्रकार प्रत्येक पदार्थ के भीतर ऊर्जा छिपी है। इसमें ऊर्जा को जागृत करनेकी विधि का ज्ञान होना जरुरी है। पदार्थ, ऊर्जा का ही सगंठित और सुप्त रुप है। अल्बर्ट आईन्सटाईन ने जो ऊर्जा समीकरण दिया है वह इसी तथ्य को सिद्ध करता है।

$\mathbf{E = mc^2}$

E = Energy (ऊर्जा)

M = Ma (द्रव्यमान)

C = Speed of light (प्रकाश का वेग) i.e. 3 Lakh km./s.

जैसे लकड़ी में आग है और तिल में तेल है। जैसे दोनों हथेलियों को आपस में रगड़ने पर हथेलियाँ गर्म हो जाती हैं।

ss हमको जीवन भर भिन्न-भिन्न कार्यों को पूर्ण करने के लिए १०% ऊर्जा भोजन से, २०% ऊर्जा नींद तथा श्वासों से तथा ७०% ऊर्जा सूक्ष्म चक्रों से प्राप्त होती हैं। हमारे सूक्ष्म शरीर में स्थित चक्र ब्रह्माण्डीय ऊर्जा के केन्द्र हैं। इन चक्रों से होकर हमारे शरीर व मन को ऊर्जा प्राप्त होती है। हमारे शरीर में उपस्थित चेतना एक प्रकार की चिन्मय ऊर्जा है, जो अविनाशी और अव्यय है। इसको ही जीवन तथा प्राण के रुपो में जाना जाता है।

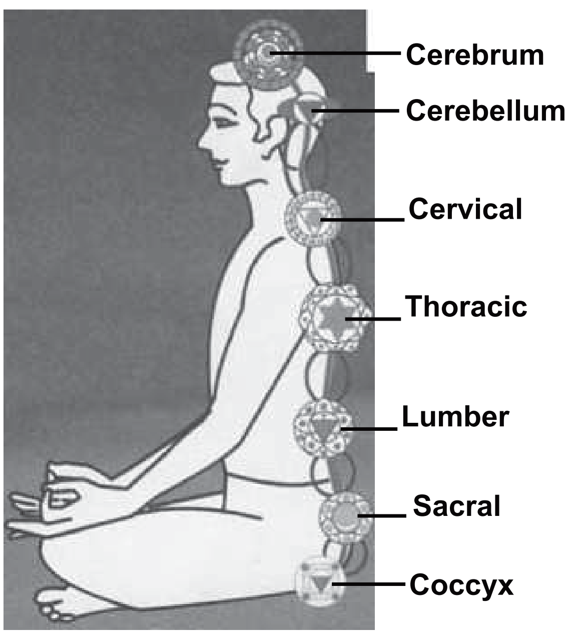
मनोवैज्ञानिक **सिग्मण्ड फ्रायड** ने मानवीय मन का बड़ा गहरा अध्ययन किया है। उन्होंने बताया कि मनुष्य के मन की शक्ति अनन्त है। यह शक्ति सुप्त और कुण्ठित अवस्था में पड़ी रहती है। मनुष्य का मन मुख्यतः तीन भागों में विभाजित है- चेतन, अवचेतन तथा अचेतन।

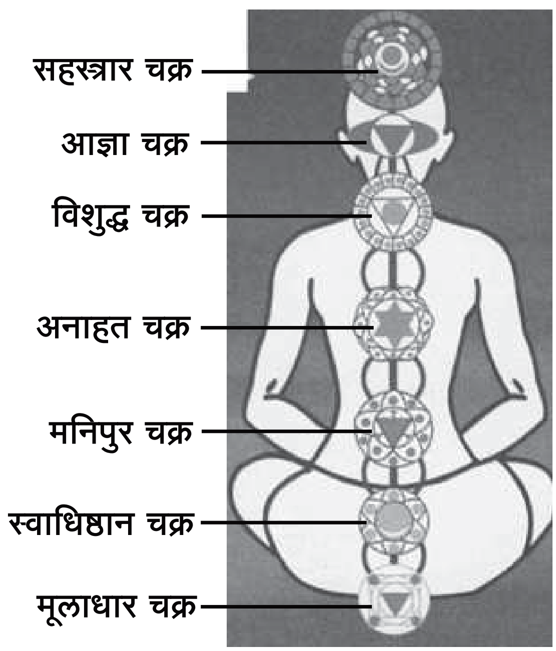
चेतन मन (**Conscious mind**) का मुख्य कार्य व्यवहारिक जीवन में समन्वय करना है। सुनना, बोलना, अल्पकालिकस्मृति,(Shortterm memory) पढ्ना, लीखना, सीखना-कल्पना आदि शक्तियों के लिये चेतन मन सहायक है। अचेतन मन (unconsious mind) में मुख्य रुप से पुरानी, अच्छी-बुरी स्मृतियाँ, आदतें, भय तथा कई प्रकार की वैचारिक तथा भावनात्मक ग्रन्थियाँ रहती हैं। अचेतन मन में ही हमारी समस्त शक्तियाँ सुप्तावस्था में पड़ी रहती हैं। हमारा अवचेतन मन (Subconscious mind) अचेतन मन तथा चेतन मन के बीच में पुल का कार्य करता है। साधारण तौर पर मानव अपने मन की शक्ति का पाँच से बारह प्रतिशत तक ही उपयोग कर पाता है। हमारा चेतनमन सीधा सिम्पथेटिक नर्व्हस सिस्टिम (Sympathetic nervous system) से जुड़ा है तथा यही कार्यात्मक ऊर्जा के लिये उत्तरदायी है। वैज्ञानिकों के अनुसार शरीर में ऊर्जा का संचार कराने में चेतन मन सहायक है। आसपास के वातावरण के साथ सामंजस्य एवं प्रतिक्रियाओं के लिये भी चेतन मन ही उत्तरदायी है। अवचेतन मन दोनों से जुड़ा है। **5-12%** तक मानसिक शक्ति का उपयोग करके भी मनुष्य महान उपलब्धियों को प्राप्त कर सकता है। जैसे श्रेष्ठ वैज्ञानिक, महान कलाकार, अनुसंधानकर्ता,

आविष्कारक, चित्रकार, उच्च संगीतकार, दार्शनिक, आदि शेष ९०% ऊर्जा तथा शक्तियाँ सुप्त अवस्था में पड़ी रहती हैं और मनुष्य को ज्ञान भी नहीं हो पाता है कि वह अनन्त शक्तियों का मालिक है।

७. चक्र परिचय

चक्र परिचय : चक्र का अर्थ है गोला या वृत्त किन्तु योग साधना में इस शब्द का अर्थ है चक्रवात अथवा भंवर यह यौगिक चक्र वास्तव में ब्रह्माण्डीय ऊर्जा की तरंगोंके सघन गुच्छे होते हैं। शरीर में ब्रह्माण्डीय ऊर्जा के प्रवाह मार्ग को नाड़ी कहा जाता है। इस प्रकार यह चक्र मेरुदण्ड व शरीर के वे स्थान हैं। जहाँ पर कई नाड़ियाँ मिलती और निकलती हैं। ये नाड़ियाँ और चक्र नग्न आंखों से नहीं देखे जा सकते हैं। ये सूक्ष्म नाड़ियाँ तथा चक्र सूक्ष्म प्राण के प्रवाह के मार्ग के विशेष स्थान है। हमारे शरीर में मुख्य चक्र सात हैं। इन सात चक्रों को ही ऊर्जा केन्द्र कहा जाता है। यह सभी मेरुदण्ड (Spinal card) में नीचे से ऊपर तक स्थित हैं। (मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा, सहस्त्रार)





मूलाधार चक्र : मूलाधार चक्र का स्थान गुदाद्वार तथा जननेंद्रिय के बीच में होता है।

स्वाधिष्ठान चक्र : स्वाधिष्ठान चक्र का स्थान जननेंद्रिय के ठीक पीछे स्थित होता है।

मणिपुर चक्र : मणिपुर चक्र का स्थान नाभि के ठीक पीछे रीढ़ की हड्डी में स्थित होता है।

अनाहत चक्र : अनाहत चक्र का स्थान छाती के खड्डे के ठीक पीछे रीढ़ की हड्डी में स्थित होता है।

विशुद्ध चक्र : विशुद्ध चक्र का स्थान गले के खड्डे के पीछे रीढ़ की हड्डी में स्थित होता है।

आज्ञा चक्र : आज्ञा चक्र का स्थान पिट्युटरी तथा पिनियल ग्लैण्ड के बीच में दोनों भौहों के मध्य में स्थित है।

सहस्त्रार चक्र : सहस्त्रार चक्र का स्थान तालू के ऊपर मस्तिष्क में स्थित होता है। सहस्त्रार चक्र सात चक्रों में सर्वोच्च चक्र है।

चक्र - विवरण				
चक्र	तत्व	तन्मात्रा	कोष	गुण
मूलाधार	पृथ्वी	गंध	अन्नमय	सम्पदा
स्वाधिष्ठान	जल	रस	प्राणमय	काम
मणिपुर	अग्नि	रुप	मनोमय	भावना
अनाहत	वायु	स्पर्श	विज्ञानमय	अहम्
विशुद्धि	आकाश	शब्द	आनन्दमय	विवेक
आज्ञा	गुरुतत्व	---	---	---
सहस्त्रार	तत्वातीत	---	---	---

८. स्थूल शरीर रचना

मुख्य रुप से शरीर के तीन स्तर हैं (१) स्थूल शरीर, (२) सूक्ष्म शरीर (३) कारण शरीर। ये ही चेतना की अभिव्यक्ति के तीन माध्यम हैं। स्थूल शरीर प्रत्यक्ष है जो कि हम अपनी आँखों से देख सकते हैं। सूक्ष्म शरीर प्रकाशमान सघन प्राण ततुओं के जाल जैसा है। सूक्ष्म शरीर को नग्न आंखों से नहीं देखा जा सकता है। यह ध्यान की गहराई में स्वतः अनुभव होता है। (दिव्य प्रकाश के रुप से हमें सूक्ष्म शरीर का साक्षात् होता है।) कारण शरीर को नाद शरीर तथा भाव संवेदनाओं के उद्गम स्थान के रूप में भी जाना जाता है।

स्थूल शरीर : मानव शरीर की रचना बहुत जटिल है। शरीर की आंतरिक संरचना बहुत ज्यादा सुसगंठीत है। प्रकृति ने बड़ी सूक्ष्मता से इसकी एक-एक कोशिका, कार्य और संरचना-प्रणाली का निर्माण किया है। इस शरीर की आंतरिक रचना बहुत रहस्यमयी और विलक्षण है। यदि हम शरीर की कुछ आधारभूत और आवश्यक जानकारी रखते हैं तो यह हमारे दृष्टिकोण को सकारात्मक रखने और साधना में सहयोगी ही सिद्ध होता है। पदार्थ का सबसे छोटा कण 'परमाणु' कहलता है और परमाणु के भी छोटे-छोटे हिस्से होते हैं। इसी प्रकार शरीर की सबसे छोटी इकाई (Unit) 'कोशिका' (Cell) होती है। कोशिका के अन्दर उसके कई छोटे-छोटे अंग अवयव होते हैं। कोशिकाएँ अपने कार्य एवं सरंचना के अनुसार कई प्रकार की होती हैं। एक प्रकार की कई कोशिकाएँ मिलकर 'ऊतक' (Tissue) का निर्माण करती हैं। एक प्रकार के कई ऊतक मिलकर अंग का निर्माण करते हैं। एक प्रकार के कार्यप्रणाली के अंग मिलकर एक तंत्र (System) बनाते हैं, जैसे पाचन तंत्र, अस्थि तंत्र, श्वसन तंत्र इत्यादि। अलग-अलग प्रकार के तंत्र मिलकर शरीर बनता है।

रक्त (Blood) : रक्त इस संस्थान केलिए मुख्य भूमिका निभाता है। यह सारे शरीर के लिए डाकिया का काम करता है। यह पोषक तत्वों, प्राणवायु जैसे महत्वपूर्ण घटकों को सारे शरीर में पहुँचाता है तथा सारे शरीर के विषाक्त द्रव्यों का परिवहन उत्सर्जी इन्द्रियों तक करता है। मानव शरीर में आठ प्रकार के (A Rh+ve, B Rh+ve, AB Rh+ve, O Rh+ve, A Rh-ve, B Rh-ve, AB Rh-ve, O Rh-ve) रक्त गट पाये जाते हैं।

९. मानवीय चेतना संस्थान का चक्रों से सम्बन्ध

मानवीय चेतना संस्थान का चक्रों के साथ सम्बन्ध निम्नप्रकार से रहता है।

१) मूलाधार चक्र : स्पायनल कॉर्ड के कॉक्किजिअल नर्व्हस (Coccygeal Nerves) का सम्बन्ध मूलाधार चक्र से है। ये कॉक्किजिअल नर्व्हस मानव शरीर में मलद्वार (Anus) और उससे जुड़े हुए मलविसर्जन संस्थान को नियंत्रित करते हैं। शास्त्रों में मूलाधार चक्र का भी यही कार्य बताया है।

२) स्वाधिष्ठान चक्र : रिड़ कि हड्डु (स्पायनल कॉर्ड) के सेक्रल नर्व्ज (Sacral Nerves) का घनिष्ठ सम्बन्ध स्वाधिष्ठान चक्र से है। यह सेक्रल नर्व्ज शरीर में जननेंद्रिय (Sex organs) और मूत्रवह संस्थान को नियंत्रित करती है। इसका वृक्क (Kidney) और मूत्राशय (Bladder) से सम्बन्ध आता है। स्वाधिष्ठान चक्र का भी यही कार्य है।

३) मणिपुर चक्र : रिड़ कि हड्डु (स्पायनल कॉर्ड) के लम्बर नर्व्हज (Lumber Nerves) से मणिपुर चक्र का सम्बन्ध है। सोलर प्लेक्सस (Solar Plexus) भी लम्बर नर्व्हज में ही समाविष्ट है। ये नर्व्हज अपने आमाशय (Stomach), यकृत (liver), अग्नाशय (Pancreas), लघु आंत्र (Small Bowel), बृहद आंत्र (Large Bowel) इन अवयवों को नियंत्रित करती है। मणिपुर चक्र का भी यही कार्य है।

४) अनाहत चक्र : रिड़ कि हड्डु (स्पायनल कॉर्ड) में थोरॅसिक नर्व्हज (Thoracic Nerves) का सम्बन्ध अनाहत चक्र से है। थोरॅसिक नर्व्हज अपने शरीर में फुप्फुस, हृदय आदि अवयवों को नियंत्रित करती है। अनाहत चक्र भी इन्हीं अवयवों पर नियंत्रण करता है।

५) विशुद्ध चक्र : रिड़ कि हड्डु (स्पायनल कॉर्ड) में सर्व्हायकल नर्व्हज (Cervical Nerves) का सम्बन्ध विशुद्ध चक्र से है। सर्व्हायकल नर्व्हज अपने शरीर में थायराईड ग्रन्थि, पॅरॉटिड ग्रन्थि, सबलिंग्युअल ग्रन्थि, सब मॅक्सलरी ग्रन्थि इनसे है। कण्ठ का भी नियंत्रण यही नर्व्हज करती है। थायरॉईड आदि ग्रन्थियों पर नियंत्रण करना ही विशुद्ध चक्र का कार्य है।

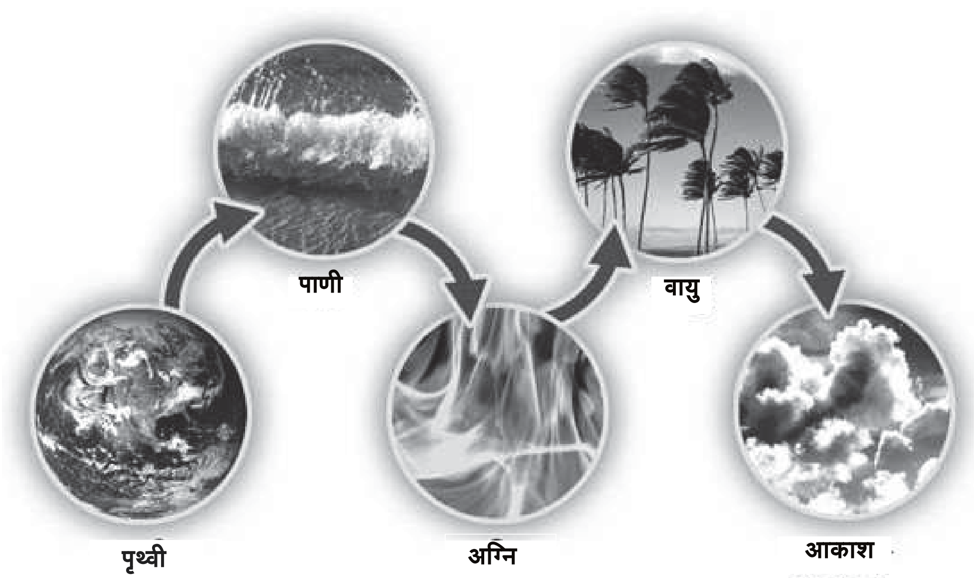
६) आज्ञा चक्र : मस्तिष्क में मध्यमस्तिष्क (Mid brain) का जो स्थान है, वही आज्ञा चक्र का स्थान है। यह ब्रेन सभी इन्द्रियों पर नियंत्रण करता है। आज्ञा चक्र का भी यही कार्य है।

७) सहस्त्रार चक्र : मस्तिष्क का जो क्षेत्र सबसे ऊपर स्थित है वही सहस्त्रार चक्र का स्थान हैं। यह प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष रुप से मानवीय शरीर के बहुत से मुख्य संस्थानों का नियंत्रण करता है। सहस्त्रार चक्र पूर्ण शरीर में मुख्य चक्र माना गया है। यह भी मुख्य क्रियाओं पर नियंत्रण करता है ।

१०. पंच तत्व का स्वास्थ पर प्रभाव

समस्त सजीव सृष्टि की निर्मिति पँचतत्वों से बनी हुई है –

पंचतत्वों के चित्र



पृथ्वी (Earth), **पानी** (Water), **हवा** (Air), **अग्नि** (Fire), **और आकाश** (Ether) **इन** पाँच तत्वों की निर्मिति सत्व, राजस एवं तामस इन त्रिगुणों से बनी हुई है –

१) सत्व गुण से आकाश तत्व
२) राजस गुण से वायु तत्व
३) सत्व एवं राजस गुण से अग्नि तत्व
४) सत्व एवं तामस गुण से जल तत्व
५) तामस गुण से पृथ्वी तत्व

और इन्हीं पाँच तत्वों से अपने शरीर की तीन प्रमुख प्रकृतियाँ बनी हैं–जैसे कि

१) आकाश और वायु से वात प्रकृति (दोष)
२) अग्नि और जल से पित्त प्रकृति (दोष)
३) जल और पृथ्वी से कफ प्रकृति (दोष)

विभिन्न तत्वों के असन्तुलन से होने वाले रोग : शरीर का रोगी होना और निरोगी रहना यह भी पंचमहाभूतों की स्थिति पर निर्भर करता है। आहार–विहार की असावधानी की वजह से तत्वों का शरीर में स्थित नियत परिणाम

घट–बढ़ जाता है, फलस्वरुप शरीर को व्याधि हो जाती है।
१) आकाश तत्व में उत्पन्न हुई विकृति की वजह से मूर्च्छा, उन्माद, पागलपन, अनिद्रा, वहम (भ्रम), घबराहट, गूंगापन, बहरापन, विस्मृति आदि रोगों का आना हो सकता है।
२) वायु तत्व की कमी से गठिया, लकवा, दर्द, अकड़न, गुल्म, हड़फूटन (हड्डियों का टूटना) नाड़ी–विक्षेप आदि रोग उत्पन्न होते हैं। तो वायु तत्व के आधिक्य से पार्किन्संस (कंप) हो सकता है।
३) अग्नि तत्व की कमी से शीत, संधिवात्, जुकाम, नपुंसकता, गठिया, मन्दाग्नि, अपचन, शिथिलता जैसे रोगों का उत्थान हो जाता है। अग्नि तत्व अगर बढ़ जाता है तो फोड़े फुन्सी, रक्तपित्त, हैजा, बस्तिक्षय, उपदंश, चेचक जैसे विकार उत्पन्न हो सकते हैं।
४) जल तत्व की गड़बड़ी से जलोदर, पेचिश, संग्रहणी, बहुमूत्रता, प्रमेह, स्वप्नदोष, प्रदर, जुकाम, खाँसी जैसे रोग उत्पन्न हो सकते हैं।
५) पृथ्वी तत्व की न्यूनता से दौर्बल्य, थकान, फिट्स (मिर्गी), वजन कम होना, अस्थिमार्दवता, अस्थिभंग, पीलिया, ज्वर, हायपरथायराईडिझम, अल्सर जैसी व्याधियाँ हो सकती हैं। तथा पृथ्वी तत्व की अधिकता से मोटापा आना, हायपोथायरॉइडिसम जैसे रोग उत्पन्न हो सकते हैं।

उपरोक्त विवरण से यही प्रतीत होता है कि पंचमहाभूतों के परिणाम का बढ़ना एवं मात्रा का परिमाणसे अधिक घटना अथवा विकृत होना ही व्याधि का मूल कारण है। यदि सभी पाँच मूल तत्व अपने सही अथवा प्राकृत अवस्था में शरीर में उपस्थित हों तो शरीर कभी भी व्याधि ग्रस्त नहीं हो सकता है। किसी कारणवश यदि इन पांच तत्वों में गड़बड़ी उत्पन्न हुई तो निश्चित रुप से शरीर व्याधि ग्रस्त हो जाएगा और ऐसी स्थिति में उन बिगड़े हुये तत्वों को संतुलित करना ही एक मात्र सही उपचार हो सकता है। प्राचीन काल से चलते आये आयुर्वेद में इन बिगड़े हुये तत्वों को संतुलित बनाने का उपचार बताया गया है। और उस उपचार पद्धति का उपयोग करके कई लोग व्याधि से मुक्त हो रहे हैं, परन्तु यह उपचार केवल भोगियों के लिये ही है ! जो मानव प्रकृति के नियमानुसार नहीं चल सकता है केवल उनके लिए ही ऋषि मुनियों ने आयुर्वेद का निर्माण किया है।

नव नाथो ने षट्योग की निर्मिति करके इन पंचतत्वों को संतुलित करने

की विधि सारे जगत को दी है। अपना शरीर पंचमहाभूतों से बना हुआ है यह तो आपको ज्ञात है। ऋषियोंने अपने अष्टांग योग में प्राणायाम की विधि बताई हुई है, जिससे अपने शरीरांतर्गत ऊर्जा स्त्रोतों को उद्दीप्त किया जाता है। इसका मतलब है कि अपने शरीर में ऊर्जा स्त्रोत हैं, जो ऊर्जा उत्पन्न करते हैं, जिन्हें अध्यात्म में चक्र के नाम से जाना जाता है। अपने शरीर में मुख्यतः सात चक्र स्थित हैं, जिनका इन पंचमहाभूतों के साथ गहरा सम्बन्ध है। अब हम वही सम्बन्ध नीचे दिये गए चार्ट (तालिका) से जानेंगे।

चक्र अवयव	शरीर का सम्बन्धित भूत/तत्व और रंग	सम्बन्धित पंच महाभुत
मूलाधार चक्र (चार नाड़ियाँ)	सेक्रल, कॉक्सिजिअल प्लेक्सस अंडकोष, ओव्हरीस	पृथ्वी तत्व/लाल रंग
स्वाधिष्ठान चक्र (छह नाड़ियाँ)	हायपोगॅस्ट्रिक, लम्बर प्लेक्सस प्रोस्टेटस् ग्लैण्ड (ग्रन्थि), ॲड्रीनल ग्लैण्ड (ग्रन्थि), किडनी	जल तत्व/भगवा रंग
मणिपुर चक्र (दस नाड़ियाँ)	सोलार (नाभि), कोलिक प्लेक्सस	अग्नितत्व/पीला रंग स्वादुपिण्ड
अनाहत चक्र (बारह नाड़ियाँ)	हृदय, थायमस ग्रन्थि, कारडियाक् प्लेक्सस	वायु तत्व/हरा रंग
विशुद्ध चक्र (सोलह नाड़ियाँ)	सर्व्हायकल, पल्मुनरी प्लेक्सस, थायरॉईड, पॅराथायरॉईड ग्रन्थि	आकाशतत्व/ नीला रंग
आज्ञा चक्र (दो नाड़ियाँ)	पिच्युटरी व पिनीअल ग्रन्थि मेड्यूला ऑब्लाँगाटा, आँखें	अध्यात्म की दृष्टि से (प्राणतत्व)/ आकाश तत्व/जामुनी नीला रंग
सहस्त्रार चक्र (सहस्त्र नाड़ियाँ)	मस्तिष्क	अध्यात्म की दृष्टि से (परमतत्व) आकाश तत्व/बैगनी रंग

मानवीय शरीर की कार्यपद्धति : मानवीय शरीर पूर्णतः निरोगी रहना ही आत्मज्ञान पाने की गुरुकिल्ली (चाबी) है। पृथ्वी पर जितने प्रकार के सुख हैं, उनमें निरोगी शरीर ही परम सुख माना गया है। इस महत्ता के कारण ही उत्तम आरोग्य रखने के लिए मानव को अपने शरीर की अधिक से अधिक जानकारी होना महत्वपूर्ण है।

विज्ञान की दृष्टि से देखा जाये तो लगभग ५० लाख वर्ष पहले पृथ्वी पर मानव का जन्म हुआ। मानवीय शरीर की रचना तो उससे भी अधिक आश्चर्य में डालने वाली है। आज के इस यंत्र युग में ऐसा एक भी यंत्र नहीं है कि, जिसके जैसा कार्य करने की योग्यता सृष्टि के कर्ता ने मानवीय शरीर में भी निर्माण न की हो। मानवीय शरीर में इन्द्रियों के रुप में जो यंत्र हैं वह नाजुक होने के साथ-साथ मजबूत भी होते हैं। यही नहीं बल्कि उनकी औसत आयु कम से कम १०० वर्ष की होती है। शरीर में उत्पन्न हुई किसी भी प्रकार की व्याधि को सही करने की क्षमता इन यंत्रों में प्राकृतिक रुप में स्थित है। तो आइये अब हम एक तालिका की सहायता से इस शरीर के सम्बन्ध में जानने का प्रयास करते हैं।

संस्था/तत्व	महत्वपूर्ण इन्द्रिय, संयोगी पेशीजाल या पेशी	कार्य
अस्थि संस्थान (Skeletal System) /पृथ्वी तत्व	शरीर में स्थित सभी हड्डियाँ, कूर्चा एवं जोड़	इन्द्रियों को आधार देना, आकार देना, उनका संरक्षण करना तथा उनमें हलचल करना।
स्नायु संस्थान (Muscular System) /(Movements)	अस्थिपंजर की हड्डियों को पृथ्वी तत्व	शरीर की स्थूल क्रियायें जकड़े हुये स्नायू करना
चेता संस्थान (Nervous System)/ आकाश तत्व	मेरुरज्जु, चेता एवं ज्ञानेन्द्रियाँ	इन्द्रियों का संचालन (हलचल) करना और उन पर नियंत्रण रखना, संवेदना ग्रहण करके बाह्य जगत का ज्ञान कराना, उष्णता नियमन, रक्ताभिसरण, स्त्रावोत्पादन करना और उन पर नियंत्रण रखना, प्रेरणा की निर्मिति करना तथा उसको स्वीकार करके उसे अन्यत्र भेजना और पूर्वानुभव का संचय करना।

आवरण या कवच संस्थान (Integum-entary) पृथ्वी तत्व	त्वचा, बाल, नाखून और ग्रन्थियाँ	बाह्य आघात से बचाव करना, शरीर में पानी की मात्रा का नियंत्रण करना, साथ ही तापमान का नियंत्रण रखना।
पचन-संस्थान (Digestive System) /अग्नि तत्व	मुख, मुखगुहा, ग्रसनी, ग्रासिका, जठर, आंतड़ियाँ, मलद्वार, यकृत स्वादुपिण्ड, लार ग्रन्थि	अन्न ग्रहण करना और उसका पाचन करना। अन्नरस में से पोषक तत्व का शोषण करना और उसमें से जो निरुपयोगी है उसे विष्ठा के रुप में शरीर से बाहर फेंकना।
श्वसन-संस्थान (Respiratory System) /वायु तत्व	नासिका, नासिकाविवर, स्वरयंत्र, श्वसनमार्ग, फेफड़े, श्वसन नलिकाओं की उपशाखाएं-श्वसनी, वायुकोष में स्थित स्नायु	शरीर में स्थित सभी पेशियों को प्राणवायु की पूर्ति करना और कार्बन डायाऑक्साईड जैसे (श्वास पटल, पसलियों के बीच के) विषाक्त पदार्थों को बाहर फेंकना।
अभिसरण-संस्थान Circulatory System)/वायु तत्व	हृदय, धमनी, नीली कोशिका /कोशवाहिनियां, रक्त एवं रक्तवाहिनियां	रक्त के द्वारा प्राणवायु और पोषक द्रव्य शरीर के अलग-अलग अवयवों को पहुँचाना, शरीर का तापमान नियंत्रित रखना।
प्रतिक्षम-संस्थान (Immune System) /वायु तत्व	श्वेत रक्तपेशी, अस्थिसार में स्थित विशिष्ट पेशी, लसिका ग्रन्थि, प्लीहा	अतिसूक्ष्म जीव, परोपजीवी एवं विषाणुओं से शरीर का रक्षण करना।
मूत्र विसर्जन-संस्थान (Urinary Excretory System) /जल तत्व	मूत्रपिण्ड, मूत्रवाहिनी, मूत्राशय, मूत्र मार्ग	मूत्र निर्मिति और मूत्र विसर्जन तथा रक्त के घटकों का नियमन करना।
प्रजनन-संस्थान (Reproduction System) /जल तत्व	**स्त्री** : बीज कोष वाहिनियां, गर्भाशय, डिम्बग्रन्थियाँ, बाह्यजननेंद्रियः स्तन, योनि, **पुरुष** : वृषण (वीर्योत्पादक)	लैंगिक पेशी एवं संप्रेरकों की निर्मिति करना।

	शुक्र वाहक, रेताशय मूत्राशय के पास होने वाली अष्ठिला या पुरस्थ ग्रन्थि (प्रोस्टेट) बाह्यजननेंद्रियः लिंग व अण्डकोष	
लसिका–संस्थान (Lymphatic System) vascular System)/वायु तत्व	लसिका ग्रन्थि, वाहिनियां एवं यौवनलोपी (थायमस) ग्रन्थि	द्रव पदार्थ अभिसरण हेतु फिर से शरीर में भेजना, शरीर में मृत हुई पेशियों को शरीर से बाहर फेंकना।

उपरोक्त संस्था के द्वारा मानवीय शरीर बना हुआ है ठीक उसी तरह कुछ अदृश्य अवयवों के समुच्चय भी अपने शरीर में स्थित हैं। (दृश्य अवयव – आँख, कान, हाथ, पैर, त्वचा इत्यादि। अदृश्य अवयव–जठर, हृदय मूत्रपिण्ड यकृत, प्लीहा, फुफ्फुस (फेंफड़े) इत्यादि) इन सभी दृश्य, अदृश्य अवयवों का आधारभूत और मूल घटक जीवकोष (प्रियोलॉजिकल सेल p iological cell) ऐसे कोशिका से अपना ये शरीर बना हुआ है। यह अरबों कोशिकाएं शरीर रुपी इमारत की ईंट के समान हैं। वह इतनी सूक्ष्म रुप में होती हैं कि उन्हें देखने के लिये सूक्ष्मदर्शी यंत्र की जरुरत होती है। इन कोशिकाओं के समूह को ऊतक (Tissue) कहा जाता है। ये ऊतक विविध आकार और प्रकार के होते हैं। शरीरांतर्गत समुच्चय अवयवों का कार्य इन्हीं ऊतक के समूह से ही होता है। बाह्य वातावरण में आये हुये बदलाव की वजह से और शरीरांतर्गत कारणों की वजह से इनमें परिवर्तन होता रहता है।

निर्जीव पदार्थ (Matter) में जो स्थान अणु (Atom) का होता है, ठीक उसी तरह का स्थान सजीव प्राणियों में होता है। पदार्थ के सभी गुण जैसे उसके एक सूक्ष्माति सूक्ष्म परमाणु में पाये जाते हैं ठीक उसी प्रकार से सजीव के सभी गुण उसकी प्रत्येक पेशी में पाये जाते हैं। कोशिका भोजन को ग्रहण करती है, निरुपयोगी द्रव्य को बाहर फेंकती है (उत्सर्जन क्रिया)। कोशिका की वृद्धि (ग्रोथ) भी होती है। वह गतिशील होती है। उसकी सदा उत्पत्ति (पूर्ण उत्पत्ति) होती है एवं वह नष्ट भी होती है अर्थात् उसे जन्म और मरण ये दोनों गुण जो सजीव में होते हैं, वह प्राप्त हैं।

अब हम थोड़ा पदार्थ (Matter) के बारे में जानकारी लेते हैं। अपने चारों

तरफ संसार में जो दिखाई देता है वह सब पदार्थ से बना हुआ है । पदार्थ परमाणु से बना हुआ है । पदार्थ का अपना आकारमान (Volume) और घनता (Mass) होती है। पदार्थ का आकारमान का मतलब अवकाश में व्यापी हुई जगह और घनता का मतलब भौतिक स्थूल वजन है। ये पदार्थ सारे विश्व में घन (Solid), तरल (liquid) और वायु (gaseous) के रूप में स्थित होते हैं। संक्षिप्त में पदार्थ का मतलब हमारे आसपास में जो कुछ भी है, जिसे हम अपनी ज्ञानेन्द्रियों से जान लेते हैं।

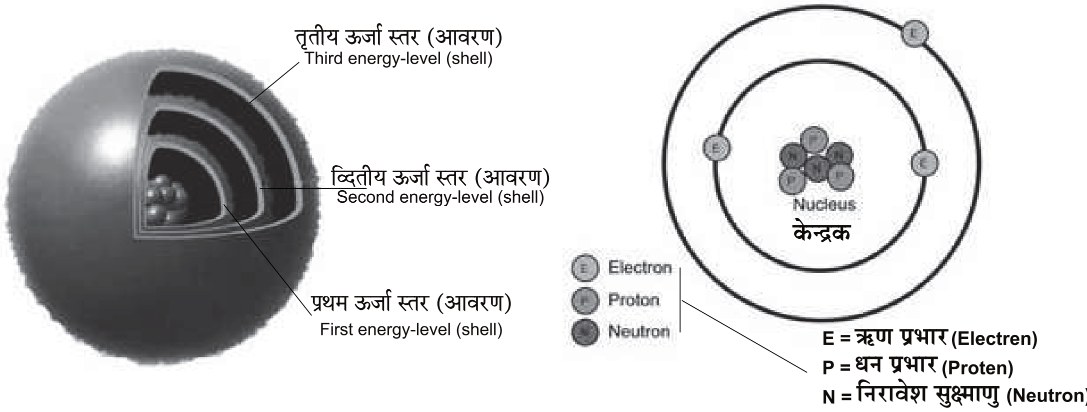
पदार्थ परमाणु से बना रहता है और अणु (ॲटम) परमाणु से बना रहता है। ऋषि कणाद का कहना था कि हर एक पदार्थ विभाजन न होने वाले कणों से बना हुआ है, जिसे वो परमाणु कहते थे।

परमाणु (Atom) तैयार नहीं किया जा सकता है और न ही विभाजित किया जा सकता है, न ही उसे रासायनिक क्रिया द्वारा नष्ट किया जा सकता है।

इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन और न्यूट्रॉन से यह परमाणु बनता है। ई. सन १८६७ में जॉन थॉमस ने यह सिद्धान्त सारे विश्व के सामने लाया कि अणु ऋण भारित इलेक्ट्रान है, जो पॉझिटिव्ह द्रव में लपेटा गया है।

रुदफोर्ड अणु सिद्धान्तानुसार परमाणु में भारी (जड़) या घना (Dense) धन (+ve) प्रभारित केन्द्र है, जिसे न्युक्लिअस कहते हैं, जिसमें पूरी घनता समायी हुई होती है एवं हल्का ऋण (-ve) प्रभारित हिस्सा (इलेक्ट्रॉन) है, जो इलेक्ट्रॉन नाम से जाना जाता है, वो न्यूक्लिअस के ईद-गिर्द घूमता रहता है ठीक वैसे ही जैसे कि सूर्यमाला, जिसे ऑर्बिट कहा जाता है।

अणु (Atom) की रचना



न्यूट्रॉन परमाणु के केन्द्र में स्थित होता है और यही सारे विश्व में फैले इस ऊर्जा का स्त्रोत है। न्यूट्रॉन के विभाजन से परमाणु से प्रचण्ड ऊर्जा का निर्माण होता है।

प्रोटॉन यह धन प्रभारित कण होते हैं, जो परमाणु के केन्द्र में न्यूट्रॉन के साथ जुड़े रहते हैं और यही धन प्रभारी प्रोटॉन, ऋण प्रभारी इलेक्ट्रॉन को अणु के साथ जोड़े रखने में मदद करता है।

सृष्टि में स्थित सभी पदार्थों में जो स्थान परमाणु का होता है, ठीक उसी तरह कोशिका (Cell) का स्थान सजीवों में पाया जाता है। पदार्थ में स्थित गुण जैसे परमाणु में पाए जाते हैं वैसे ही कोशिका में सजीवों के सारे लक्षण और गुण पाए जाते हैं। कोशिका चयापचय क्रिया करती है जैसे कि शरीर में स्थित द्रव में से त्याज्य पदार्थों का उत्सर्जन करना और जीव पोषक पदार्थों का ग्रहण करना। उसकी नियमित रुप से वृद्धि होना तथा वह गतिशील होती है, पुनरुप्ती का कार्य भी वो करती है और वह नष्ट भी होती है ऐसे इस पेशी के (Cell) के तीन मुख्य भाग होते हैं। १) जीव केन्द्रक २) जीव द्रव्य ३) जीव आवरण। पेशी ग्लूकोज और प्राणवायु का संयोग करके अपने लिए जरुरी ऊर्जा की निर्मिति करती है। इस ऊर्जा निर्मिति के लिए जरुरी प्राणवायु रक्त में स्थित लालरक्त कोशिका (आर.बी.सी.) प्रदान करती है। इस पेशी में अनेक रसायनों की निर्मिति होती रहती है। उसीमें संप्रेरक (हार्मोन्स) और विकर(एन्झाईम्स) होते हैं। इन्हीं के कारण शरीर के अलग-अलग कार्यों का नियमन होता रहता है।

विकर अन्न पचन के कार्य में सहायता करता हैं। पेशी आवरण इतना पतला और सच्छिद्र होता है कि पेशी में निर्माण होने वाले रसायन बड़ी आसानी से उससे टपक जाते हैं। पेशी के केन्द्रक में धागे जैसे दिखने वाली असंख्य गुणसूत्र होती हैं। हर एक गुणसूत्र में डी.एन.ए. नामक बड़ा अणु होता है, उसकी रचना जंजीर की तरह होती है। जंजीर के हर जोड़ को जनुक (क्रोमोसोम्स) कहा जाता है। यही जनुक अनुवांशिक गुण अगली पीढ़ी में उतारते हैं। इसी कारण से माता-पिता के गुण उनके बच्चों में पाए जाते हैं।

मानवीय शरीर का मूलभूत आधार : मानवीय शरीर की रचना अम्ल तथा अल्कधर्मीय द्रव्यों के ऊपर ही आधारभूत है। मस्तिष्क में स्थित धूसर और सफेद द्रव्य की उपस्थिति से यह स्वतः स्पष्ट हो जाता है। इन्हीं मौलिक द्रव्यों में

क्रिया–प्रतिक्रिया द्वारा विद्युत–प्रवाह निर्माण होकर समस्त शरीर में चैतन्य का निर्माण होता है।

तंत्रशुद्ध श्वसन का मानवीय जीवन में महत्व : भारतीय योगशास्त्र में इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना इन तीन प्राण वाहक नाड़ियों का उल्लेख किया गया है। इन्हें क्रमशः चन्द्र, सूर्य, अग्नि देवता का प्रतीक माना जाता है। इड़ा बायीं नासिका द्वारा प्रवाहित होती है, पिंगला दायीं नासिका द्वारा प्रवाहित होती है, तो सुषुम्ना दोनों नासिका द्वारा प्रवाहित होती है। इसी कारणवश सुषुम्ना को मध्य नाड़ी कहा जाता है।

इड़ा नाड़ी (चन्द्र नाड़ी) शीतल एवं तमोप्रधान होकर मनुष्य के विचारों को नियंत्रित करती है।

पिंगला नाड़ी (सूर्य नाड़ी) उष्ण एवं रजोप्रधान होकर मानव की प्राणशक्ति का नियंत्रण करती है।

सुषुम्ना (मध्य नाड़ी) इसे ब्रह्मनाड़ी के नाम से भी जाना जाता है। इसका गुण शीतल भी नहीं तथा ऊष्ण भी नहीं होता, लेकिन दोनों को सन्तुलित करने वाली यानि कि शीतलता और ऊष्णता इन दोनों को सन्तुलित रखने वाली होती है। इस नाड़ी द्वारा साधक को आत्मप्रकाश एवं आत्मज्ञान प्राप्त हो सकता है।

शारीरिक दृष्टि से देखा जाए तो इन तीनों नाड़ियों को संतुलित रखने से साधक स्वास्थ्य, शक्ति, शान्ति और दीर्घायुष्य पा सकता है। इसीलिए मानवीय जीवन में श्वसन का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है।

यह देखा गया है, कि जब बायीं नासिका से यानि कि पिंगला नाड़ी द्वारा श्वसित वायु सीधा मस्तिष्क में प्रवेश करता है तब वहाँ स्थित धूसर और श्वेत द्रव्यों पर तथा चेतापेशी एवं चेतातंतु पर उस वायु का प्रभाव पड़ता है। जिसके कारण से मस्तिष्क में स्थित धन प्रभारित (श्वेत द्रव्य) हिस्सा चैतन्यशील हो जाता है। ब्रेन के संदर्भ में चेतापेशी मतलब मज्जापेशी प्रभावित होने से रुधिर (रक्त) ब्रेन के पहले द्रवकुण्ड में प्रविष्ट हो जाता है। उस वक्त जो धन विद्युत निर्माण होता है, वह इस कुण्ड में जमा किया जाता है और इसका संचय जब अपनी परम अवस्था में पहुँचता है तो श्वसनानुसार वह ऋण विभाग (धूसर

द्रव्य) में प्रवाहित होता है। जब दाहिनी नासिका से श्वसन करते हैं तो वायु जो शीतल होता है वह ब्रेन की तरफ चलकर वहाँ स्थित ऋणऽ भारित धूसरद्रव्य पर प्रभाव डालता है और उसे जागृत करता है। यह वायु ब्रेन के दूसरे द्रवकुण्ड में प्रवेश करती है और वहाँ स्थित ऋण द्रव को उद्‌दीपित करके उसका प्रवाह धन विभाग की ओर चालू कर देती है, यहाँ पर अपनी परम अवस्था में पहुँचते ही श्वसन बायीं नासिका से शुरु हो जाता है। इसी प्रकार से ऋण प्रभार से धन प्रभार की तरफ और फिर यहाँ से ऋण प्रभार की तरफ रक्त का आवागमन सुलभता से चलता रहता है।

निरंतर इस प्रक्रिया से मस्तिष्क में चेतना जागृत होकर सारे शरीर में चैतन्य का संचार होने लगता है। इस चैतन्यमय संचार से समस्त पेशियाँ (शरीर में स्थित) उद्दीपित होकर प्राणमय हो जाती हैं। मेंदू-चेतारज्जू-द्रव्य मेरुदण्ड से बहता रहता है। वह ब्रेन से निकलकर नीचे की तरफ त्रिकास्थियों तक आता है। इस मेरुदण्ड में स्थित धूसर (-ve) और श्वेत (+ve) द्रव्य की वजह से वहाँ प्राणशक्ति का निर्माण होता है और यह प्राणशक्ति अष्ठिला ग्रन्थि में संग्रहित की जाती है। वहाँ यह शक्ति अपनी सुप्तावस्था में होती है, जिसे अध्यात्मिक जगत में कुण्डलिनी नाम से जाना जाता है। प्राणायाम से भूतशुध्दि क्रिया द्वारा इस शक्ति को जागृत किया जा सकता है। जैसे ही वह जागृत होती है उसे उर्ध्वगमित किया जा सकता है।

जागृत कुण्डलिनी को विविध चक्रों से यानि अंतःस्त्रावी ग्रन्थियों से घुमाया जा सकता है। जब यह शक्ति मूलाधार चक्र का भेदन करती है। तब लैंगिक (यौन) शक्ति का उत्थान होता है। वहाँ स्थित सभी अवयवों को सूक्ष्म स्तर पर प्रभावित किया जाता है। और वहाँ स्थित सभी नाड़ियों का शोधन हो जाता है। सारे विषाक्त पदार्थ जलकर एक चैतन्यमय स्थिति साधक को प्राप्त होती है। इसी प्रकार से सभी चक्रों पर प्रभाव पड़ता जाता है और अंत में सहस्त्रार चक्र में पहुँचती है तो वहाँ भी अपना उच्चतम् स्तर प्राप्त करते ही दिव्य प्रकाश का निर्माण होता है। (ब्रेन) मस्तिष्क रुपी संगणक के दल (चिप) धीरे-धीरे प्रकाशमान होने लगते हैं और साधक को एक नई दृष्टि का लाभ होता है। उसे अपने जीवन का अर्थ समझ में आता है और दिव्यज्ञान प्राप्त होता है। यह दिव्य प्रकाश जब पिच्यूटरी और पिनियल ग्रन्थि में प्रवेश करता है तब इन दो ग्रन्थियों का सम्पूर्ण शरीर पर प्राबल्य (नियंत्रण) बढ़ जाता है। उसका स्वभाव शान्त, वात्सल्यमय,

करुणामय, प्रेमपूर्ण और इच्छाशक्ति में प्रबल हो जाता है। यह सब भूतशुद्धि क्रिया द्वारा सम्भव है, लेकिन उसके लिए श्रद्धापूर्वक निरन्तर अभ्यास करना चाहिए। यह भूतशुद्धि का मतलब क्या है? उसका अपने जीवन में क्या महत्व है ? और उसके उपयोग क्या हैं? यह सब हम आगे के अध्याय में देखेंगे।

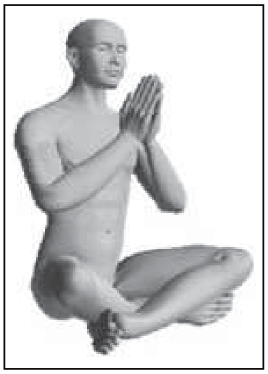
११. भूतशुद्धि क्रिया

महत्वपूर्ण निर्देश : भूतशुद्धि क्रिया शुरु करने के पहले कुछ महत्वपूर्ण बातें याद रखना आवश्यक है, जो निम्नलिखित हैं। १) जब हम ध्वनि के साथ श्वास लेते हैं, तब अपनी हथेली को शरीर से दूर ले जाते हैं। जबकि ध्वनि के साथ श्वास को छोड़ते समय हथेली को पूर्ववत् शरीर के पास लाते हैं २) सुबह के समय भूतशुद्धि क्रिया करने के लिए पूर्व दिशा की ओर मुख करके बैठना चाहिए। शाम के समय उत्तर दिशा की ओर मुख करके बैठना है। ३) सभी को स्नान के पश्चात भूतशुद्धि क्रिया के लिए बैठना चाहिये, परन्तु यह कोई आवश्यक नियम नहीं है। यदि किसी कारण वश स्नान करना सम्भव नहीं है तो हाथ–पाँव धोकर ही शांत चित्त होकर बैठें। ४) भूतशुद्धि क्रिया के लिए नियमितता से बैठें, स्वास्थ्य यदि साथ न दे तो भी आपका जहाँ भाव हो, श्रद्धा हो उनके चरणोंमे प्रार्थना करते हुए जितना सम्भव है, उतना प्रयास निष्ठापूर्वक करें। ५) भूतशुद्धि क्रिया के लिए खाली पेट बैठना चाहिए (भ.द्वा.चे.वि. अध्याय ८/११८) भूतशुद्धि क्रिया शुरु करने के पहले शांति से सहज आसन पर बैठकर प्रार्थना करनी हैं।

ॐ तमसो मा ज्योतिर्गमय् असतो मा सद्‌गमय्
मृत्योर्मा अमृतं गमय् ॐ शांतिः शांतिः शांतिः।

पंचतत्व आवाहन

ॐ पृथ्वे नमः
ॐ वरुणाय नमः
ॐ अग्नये नमः
ॐ वायव्ये नमः
ॐ आकाशाय नमः
आवाह यामी, स्थापयामी, ध्यायामी



चित्र 1

१) सर्वप्रथम आसन स्थिर करें। निम्नलिखित आसनों में से किसी भी एक आसन का चयन करें। जैसे सहज आसन, सिद्धासन, पद्मासन अथवा सुखासन।

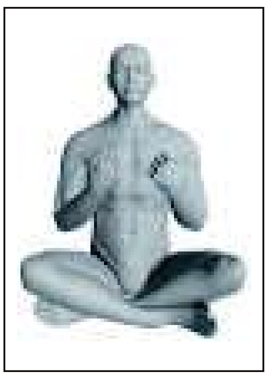
२) अपनी रीढ की हड्डी और गर्दन को सीधा रखें।

३) अपने शरीर को बिल्कुल ढीला छोड़ दें। उसमें कोई तनाव न रखें। शांति से बैठकर आँखें बन्द करें।

४) हम शरीर नहीं हैं, सिर्फ रीढ़ की हड्डी हैं। उसीसे आनेवाली प्राण की लहर सातत्य से अनुभव करें।

५) आने–जाने वाली श्वासोच्छावास पर लक्ष्य रखते हुऐ होनेवाली क्रियाओं को पूरा स्वातंत्र्य देना है।

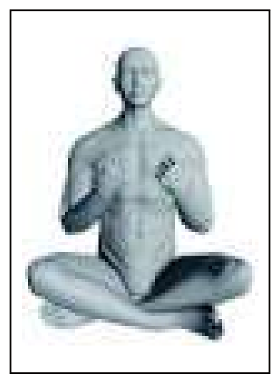
प्रथम चरण (Step-1)
(कवचाय हुँम्)



चित्र 1

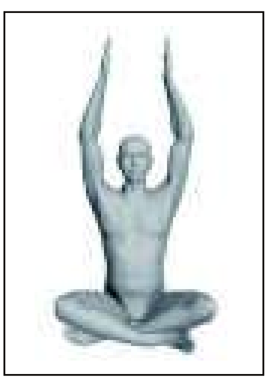
१) आज्ञाचक्र पर ध्यान केन्द्रित करें।

२) कोहनियाँ बगल में सटी हुई शरीर से लगाकर तथा अंगूठे अन्दर बन्द करके मुठ्ठियों को छाती के पास ले आयें।



चित्र 3

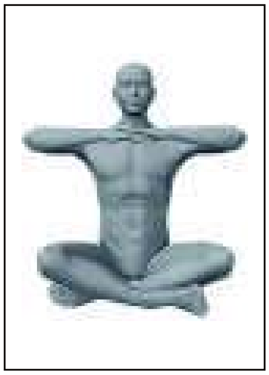
३) आज्ञाचक्र पर ध्यान करते हुए कन्धों से सिर के सामने से सो ध्वनिपर हाथों को उठाते हुये मुठ्ठियों को खोलते हुये श्वास भरनी है।



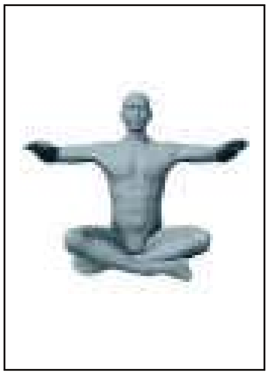
चित्र 2

४) हम् की ध्वनि पर श्वास को छोड़ते हुये मुठ्ठियों को छाती से सटा लेना है तथा कोहनियाँ शरीर से सटी हुई रखनी हैं।

५) प्रत्येक सोहम् शब्द पर यही क्रिया आज्ञाचक्र पर ६० (साठ) बार करनी है।

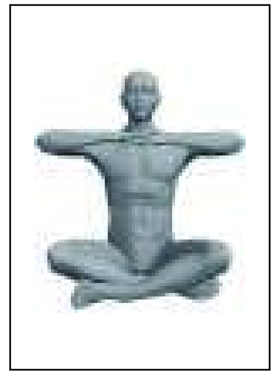


चित्र 1



चित्र 2

द्वितीय चरण (Step- 2)
(करतलकर)



चित्र 3

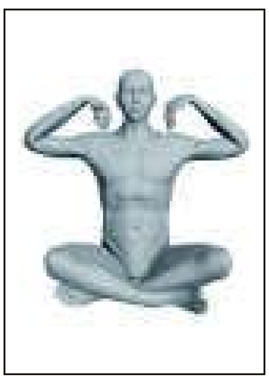
१) मूलाधार चक्र पर ध्यान दें।

२) कोहनियाँ तथा कन्धे सीधे तथा धरती के ठीक समानांतर। हथेलियाँ छाती के पास तथा उंगलियाँ व अंगूठे सीधे फैली हथेली के रुप में। हथेलियाँ भूमि की ओर होंगी और कन्धे तथा कोहनियाँ एक सीध (180^0) में ही रहेंगे।

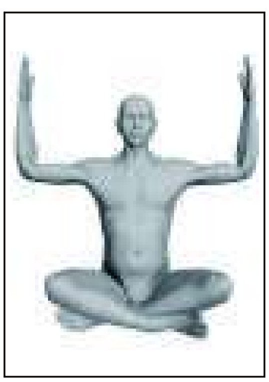
३) 'सो' की ध्वनि के समय कोहनियाँ तथा कंधे यथास्थान रखते हूए (90^0) कोन तक हाथ, कोहनियों से स्थिर रखते हुये, गति करेंगे तथा श्वास पेट और फेफड़ों में पूरी भरनी है। याद रहे शब्द प्राणायाम से ही श्वास भरनी है।

४) 'हम' की ध्वनि पर श्वास छोड़ते हुये हाथों को पूर्व स्थिति में ले आयें।

५) यह क्रिया मूलाधार चक्र पर १५ बार करनी है।



चित्र 1

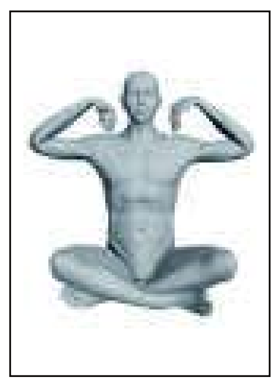


चित्र 2

तृतीय चरण (Step- 3)
(अस्त्राय फट्)

१) स्वाधिष्ठान चक्र पर ध्यान केन्द्रित करें।

२) दोनों कोहनियाँ तथा कन्धे एक सीध में रखते हुये चारों अंगुलियों तथा अंगूठे का शीर्ष मिलाकर कन्धों पर रखिए।



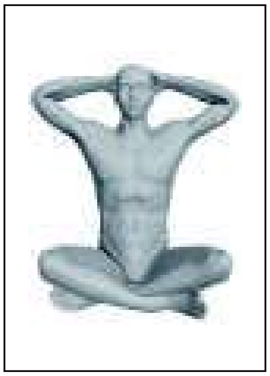
चित्र 3

३) 'सो' की ध्वनि पर कोहनियों को सीधा अचल रखते हुये हाथों से कन्धे के साथ (90^0) का कोण बनाते हैं।

४) 'हम्' की ध्वनि प्रारम्भ होते ही चुटकी बजाते हुए और श्वास छोड़ते हुये उन्हें कन्धे पर ले आना है।

५) यह क्रिया सोहम् ध्वनि के साथ स्वाधिष्ठान चक्र पर ३० (तीस) बार करनी है।

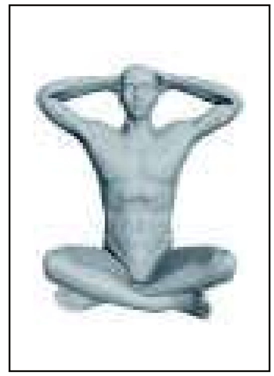
चतुर्थ चरण (Step - 4)
(शिखायै वषट्)



चित्र 1

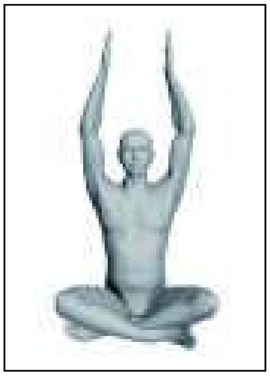
१) ध्यान मणिपुर चक्र पर केन्द्रित करें।

२) दोनों हाथों को ऊपर उठाकर हथेलियों को सिर के पीछे शिखा के पास स्थापित करें।



चित्र 3

३) फिर सोहम् की ध्वनि में सोऽऽ पर हाथों को कुँहनियों से सीधा करके ऊपर उठाना है तथा श्वास को पूरा भरना है, हथेलियाँ सीधी खुली ही रखनी हैं।



चित्र 2

४) हम्ऽऽ पर श्वास छोड़ते हुए हाथों की हथेलियाँ पुनः सिर के पीछे रखनी हैं। ध्यान रखें कि हर बार हथेलियों का क्रम बदलते रहना है।

५) यह क्रिया मणिपुर चक्र पर ४५ (पैतांलीस) बार करनी है।

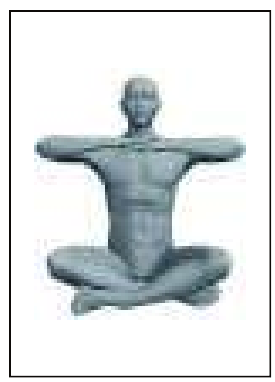
पंचम चरण (Step - 5)
(करतलकर)



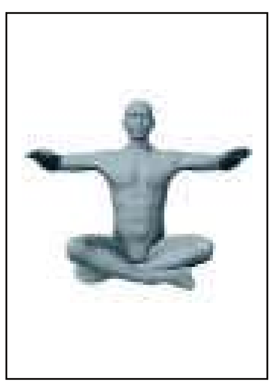
चित्र 1

१) अनाहत चक्र पर ध्यान केन्द्रित किजिये।

२) विधि पूर्ववत् द्वितीय पदक्षेप (STEP- 2) की तरह करनी है।



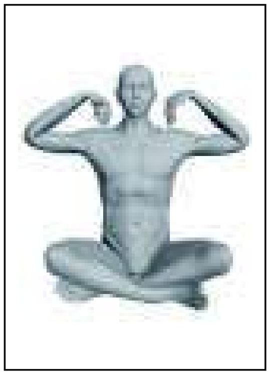
चित्र 3



चित्र 2

षष्ठ चरण (Step- 6)

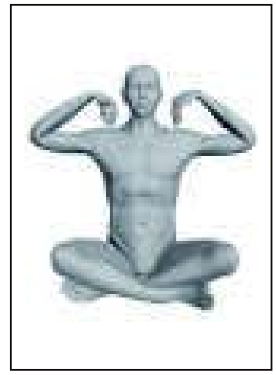
(अस्त्रायै फट्)



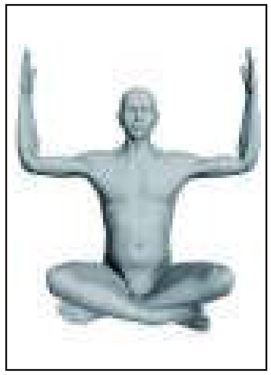
चित्र 1

१) विशुद्धि चक्र पर ध्यान केन्द्रित करना है।

२) विधि पूर्ववत् तृतीय पदक्षेप (STEP- 3) की तरह ही करनी है।



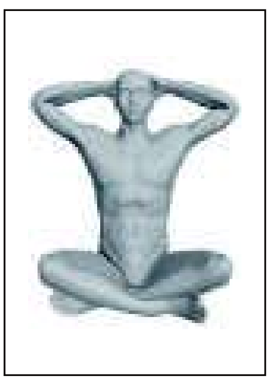
चित्र 3



चित्र 2

सप्तम चरण (Step- 7)

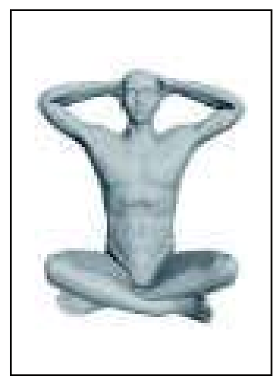
(शिखायै वषट्)



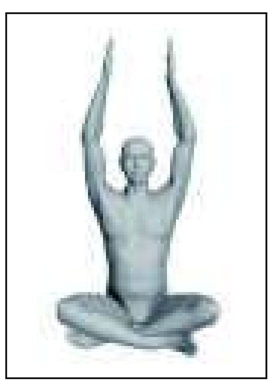
चित्र 1

१) आज्ञा चक्र पर ध्यान केन्द्रित करें।

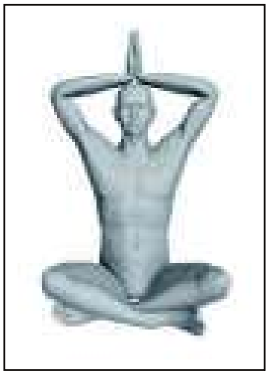
२) विधि पूर्ववत् चतुर्थ पदक्षेप (STEP- 4) की तरह ही करनी है।



चित्र 3

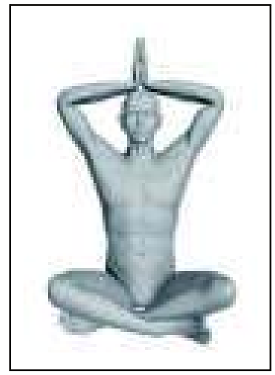


चित्र 2



चित्र 1

अष्टम चरण (Step- 8)
(शिरसे स्वाहाः)

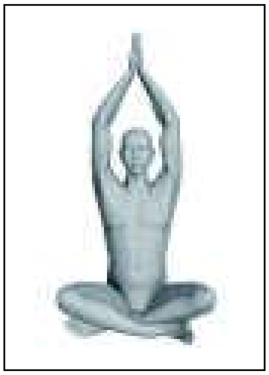


चित्र 3

१) सहस्त्रार चक्र पर ध्यान केन्द्रित करें।

२) इसमें दोनों हाथों को प्रणाम मुद्रा में सिर के ऊपर रख लेते हैं।

३) सोऽऽहम् ध्वनि में सोऽऽ की ध्वनि के साथ श्वास भरनी है और हाथों को प्रणाम की मुद्रा में सिर के ऊपर रखना है।



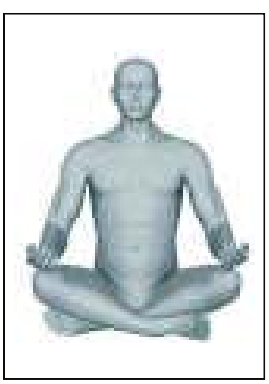
चित्र 2

४) हमऽऽकी ध्वनि पर श्वास छोड़ते हुए हाथों को प्रणाम मुद्रा में फिर से, पूर्ववत् स्थान पर (सिर पर) रख लेते हैं। परन्तु सिर को स्पर्श नहीं करना है।

५) यह क्रिया सहस्त्रार चक्र पर ६० (साठ) बार करनी है।

६) इस क्रिया में सोऽऽहम की ध्वनि थोड़े-थोड़े अंतराल में तेजी से बढ़ती जाती है। यह क्रिया ६० बार पूरी हो जाने के पश्चात् ध्यान करना है। लक्ष्य को सहस्त्रार पर ही केन्द्रित रखकर ध्यान करें। ध्यान में केवल अवलोकन करना है।

नवम् चरण (Step- 9)
(ध्यान)



चित्र 1

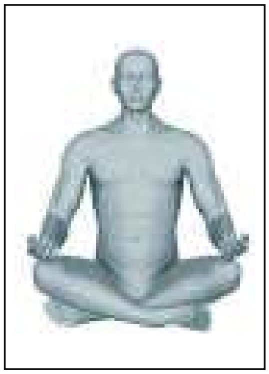
१) सहस्त्रार चक्र पर लक्ष्य केन्द्रित करें।

२) अपने भीतर (अन्दर) जो भी अनुभव हो रहा है, उसे मौन हो, द्रष्टा बनकर देखें।

३) जो हो रहा है, उसे होने दें, दिव्य ऊर्जा (Cosmic Energy) अपने भीतर आ रही है।

४) कम्पन, दिव्य ध्वनि और प्रकाश जो भी हो रहा है, उसे द्रष्टा बनकर अनुभव करें।

५) ध्यान कमसे कम 5-15 मिनट तक करना है।

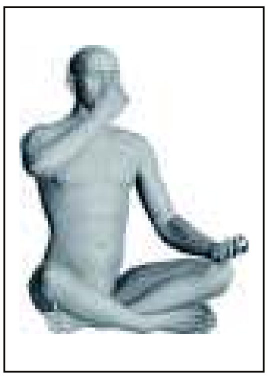


दशम् चरण (Step- 10)
(ॐकार जप)

१) लम्बी और गहरी श्वास लेनी है, ॐकार का उच्चारण करते हुये श्वास छोड़नी है।

सहत्रार चक्र से लेकर मूलाधार तक प्रत्येक चक्र पर ॐकार ध्वनि करते हुये नीचे आना है।

एकादश चरण (Step-11)
नाड़ी शोधन प्राणायाम



१) इस प्रक्रिया को शुरु करने के पहले श्वास को पूरी तरह बाहर निकाल दें।

२) दाहिने हाथ के अंगूठे से दाहिनी नासिका को बन्द रखकर बांयी नासिका से श्वास लेना है।

३) श्वास गहरी, लम्बी और धीरे से लेनी है।

४) अपनी क्षमता के अनुसार श्वास को पूरी तरह भरने के बाद दाहिने हाथ की अनामिका से बांयी नासिका को बन्द करना है।

५) अपने ऊपर अनावश्यक दबाव या तनाव न रखते हुए श्वास को अपनी क्षमतानुसार लें।

६) अब श्वास को दाहिनी नासिका से धीरे-धीरे छोड़ें, श्वास पूरी तरह बाहर जाने के पश्चात दाहिनी नासिका से ही गहरी, लम्बी और धीमी गति से श्वास लीजिए। इसके पश्चात पुनःबांयी नासिका से श्वास छोड़े।

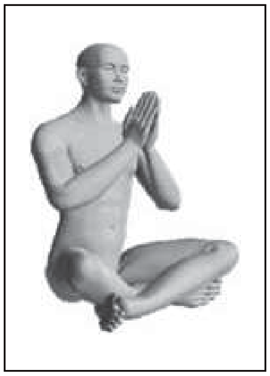
७) यह एक पूर्ण आवर्तन है (१:१)

८) मूलाधार से सहस्त्रार तक प्रत्येक चक्र पर एक-एक पूर्ण आवर्तन करना है।

९) इस पूरी प्रक्रिया को सात बार करना है।

द्वादश चरण (Step-12)
सहस्त्रार से आज्ञा चक्रपर ध्यान लेकर आयें।

१) आँखें बन्दकर आज्ञा चक्र पर हाथ जोड़कर हमें सद्गुरु और परम्पिता



परमेश्वर से मन ही मन प्रार्थना करनी है कि जो भी दिव्य आनन्द, शान्ति हमें मिली है वह सारे विश्व में, समस्त प्राणियों में बाँट दें। सभी शान्तिवान हों। सभी आनन्दित हों। सभी समृद्ध हों। सभी मंगलमय हों।

प्रार्थना के पश्चात् निम्नलिखित शांति पाठ करना है -

शांति पाठ

सिद्धम् शरणम् गच्छामि। योगम् शरणम् गच्छामि।
गुरु शरणम् गच्छामि। सत्यम शरणम् गच्छामि।
प्रेमं शरणम् गच्छामि। संघ शरणम् गच्छामि ।
धम्मं शरणम् गच्छामि। ॐ शांति शांति शांतिः।

इसके बाद दोनों हाथों की हथेलियों को धीरे से आँखों के ऊपर रख लेना है। धीरे-धीरे आज्ञा चक्र पर ध्यान करते हुए आँखों को खोलना है। तत्पश्चात् निसर्ग को धन्यवाद देना तथा मातापिता को प्रणाम करना है। दोनों हाथों के तलवे आँखों पर रखें और धीरे-धीरे आँखे खोलें। इस प्रकार भूतशुद्धि क्रिया यहाँ पूर्ण होती है। **I am that whom I want to meet, I am that who is inside me.**

कनिष्ठ भूतशुद्धि क्रिया का चार्ट			
क्र.	क्रिया	चक्र	संख्या
1.	कवचाय हुँम	आज्ञा	3o
2.	करतल कर	मूलाधार	5
3.	अस्त्राय फट्	स्वाधिष्ठान	10
4.	शिखाय वषट्	मणिपुर	15
5.	करतल कर	अनाहत	5
6.	अस्त्राय फट्	विशुद्धि	10
7.	शिखाय वषट्	आज्ञा	15
8.	शिरसे स्वाहा	सहस्त्रार	30
9.	ध्यान	सहस्त्रार	5 मिनट
10.	ॐ ध्वनि	सहस्त्रार से मूलाधार तक प्रत्येक चक्र पर	1-1 बार
11.	नाड़ी शोधन प्राणायाम	मूलाधार से सहस्त्रार तक	1-1 बार

१) पूर्ण भूतशुद्धिक्रिया : 60+15+30+45+15+30+45+60 = 300 = 55 मिनट, ध्यान 15 मिनट

२) मध्यम भूतशुद्धिक्रिया : 60+10+15+20+10+15+20+60 = 210 = 30 मिनट, ध्यान 10 मिनट

३) कनिष्ठ भूतशुद्धिक्रिया : 30+5+10+15+5+10+15+30 = 120 = 20 मिनट, ध्यान ५ मिनट

१२. ऊर्जा की दो धाराएं

यह विश्व अनंत है जिसकी सीमाओं का ज्ञान असम्भव है। यह असीम भी है और अनन्त भी। यह ब्रह्माण्ड शब्द ही अपने में दो ध्रुवों का एक बिन्दु पर मिलना प्रकट करता है। ब्रह्माण्ड शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है-ब्रह्म+अण्ड। यहाँ 'ब्रह्म' का अर्थ है अनन्त, जिसकी कोई सीमा नहीं और जो देश, काल तथा परिस्थिति के पार हो। जो निर्गुण, निराकार और आरुप है। 'अण्ड' का अर्थ एक निश्चित सीमा है जिसे देश, काल और परिस्थिति में बाध्य होना पड़ता है। इन दोनों विपरीत ध्रुवों के मिलने पर ही इस दृश्य या प्रपंच का निर्माण होता है। ये शक्तियाँ स्वभाव में परस्पर विपरीत होते हुये भी एक-दूसरे पर आश्रित हैं। ये दोनों एक-दूसरे की पूरक हैं। जैसे रात व दिन, प्रकाश और अन्धकार और स्त्री एवं पुरुष, आदि। इसी प्रकार हमारे व्यक्तित्व के भी दो पहलू हैं। एक शरीर तथा दूसरा मन। हमारा मस्तिष्क भी दाँयें और बाँयें हिस्सों में बंटा है। बांयाँ मस्तिष्क अनुकम्पी स्नायुतंत्र (Sympathetic nervous System) से जुड़ा है। दांया मस्तिष्क परानुकम्पी स्नायु तंत्र (Parasympathetic nervous System) से जुड़ा है। जिसे हम जीवन के रुप में जानते हैं वह भी जन्म तथा मृत्यु के बीच का अन्तराल है। विपरीत शक्तियाँ मिलकर ही हमारे जीवन के आधार स्तम्भ तैयार करती हैं। जैसे सूरज हमें गर्मी देता है, चंद्रमा हमें शीतलता देता है।

नाड़ी शोधन प्राणायाम में चक्रों पर पूरक और रेचक करते समय एक बात का विशेष खयाल रखना चाहिये कि श्वास को अधूरा बीच में ना छोड़ें। इससे ऊर्जा का ब्रह्माण्ड से सम्बन्ध टूटता है और चक्र में ऊर्जा का संतुलन बिगड़ जाता है। मान लिजिए कि आप किसी यात्रा में जा रहे हैं और आपकी गाड़ी बीच में खराब हो जाए और आप बीच रास्ते में फँस जायें तो आपको कैसा लगेगा? क्या आप बराबर वहाँ से निकलने का कोई प्रयास करेंगे? क्या आपको बैचैनी

होगी? इसिलिये नाड़ी शोधन प्राणायाम को बीच में ही न छोड़ें। उसकी आवृत्ति पूर्ण करके ही प्राणायाम को विराम दें।

इसके लिये आपको किसी सुखात्मक आसन में बैठना चाहिए और कमर, गर्दन एक सीध में रखें। बाँयें हाथ को बाँयें घुटने के ऊपर ज्ञान मुद्रा (तर्जनी एवं अंगूठे को मिलाकर) में रखें। दाहिने हाथ की अनामिका एवं अंगूठे का उपयोग करे अंगुठे से दाहिनी नासिका को बन्द करते हुये बाँयीं नासिका से श्वास भरे। फिर बांयी नासिका को अनामिका से बन्द करते हुये दाहिनी नासिका से श्वास को छोडे, फिर से दाहिने नासिका से श्वास को ले। दाहिने नासिका को अंगुठे से बन्द करके बाये नासिका से श्वास को छोड़ दें। यह नाड़ी शोधन प्राणायाम की एक आवृत्ति हुई।

नाड़ी शोधन का निरन्तर अभ्यास शरीर एवं मन को शुद्ध करता है। जिससे प्राण का प्रवाह सुगम एवं सुचारु रुप से होने लगता है, क्योंकि यह अभ्यास नाड़ियों को शुद्ध करता है।

१३. भूतशुद्धि क्रिया के परिणाम एवम् लाभ

पृथ्वी पर जितने प्रकार के सुख हैं, उनमें निरोगी शरीर ही परम् सुख माना गया है।

१) भूतशुद्धि क्रिया से मस्तिष्क में धारणा शक्ति तथा स्मरणशक्ति (Memory power) का अभूतपूर्व विकास होता है।

२) मन शांत तथा प्रसन्न अवस्था में रहता है।

३) आंतरिक तथा बाह्य सजगता (Awarness) का विकास होता है।

४) मानसिक संकीर्णता तथा क्रोध जैसे शत्रु हमारे जीवन से दूर चले जाते हैं और विशुद्ध प्रेम का जन्म होता है।

५) भूतशुद्धि क्रिया में शब्द प्राणायाम से निर्मित कम्पन रक्त में ऑक्सीजन की मात्रा को और साथ ही साथ हीमोग्लोबिन की मात्रा को बढ़ाता है। शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को भी उत्तेजित करता है।

६) रक्त की समस्त प्रकार की अशुद्धियाँ दूर हो जाती हैं।

७) पेट सम्बन्धी रोगों से मुक्ति मिलती है।

८) फेफड़ों की क्रियाशीलता आश्चर्यजनक रुप से बढ़ जाती है तथा फेफड़ों का अधिकतम् हिस्सा सुचारु रुप से कार्य करने लगता है।

९) मन एकाग्र होता है।

१०) शारीरिक और मानसिक स्वास्थ की प्राप्ति होती है।

११) आत्मविश्वास **(Confidance)** बढ़ता है।

१२) विचारों में आमूलचूल परिवर्तन होता है।

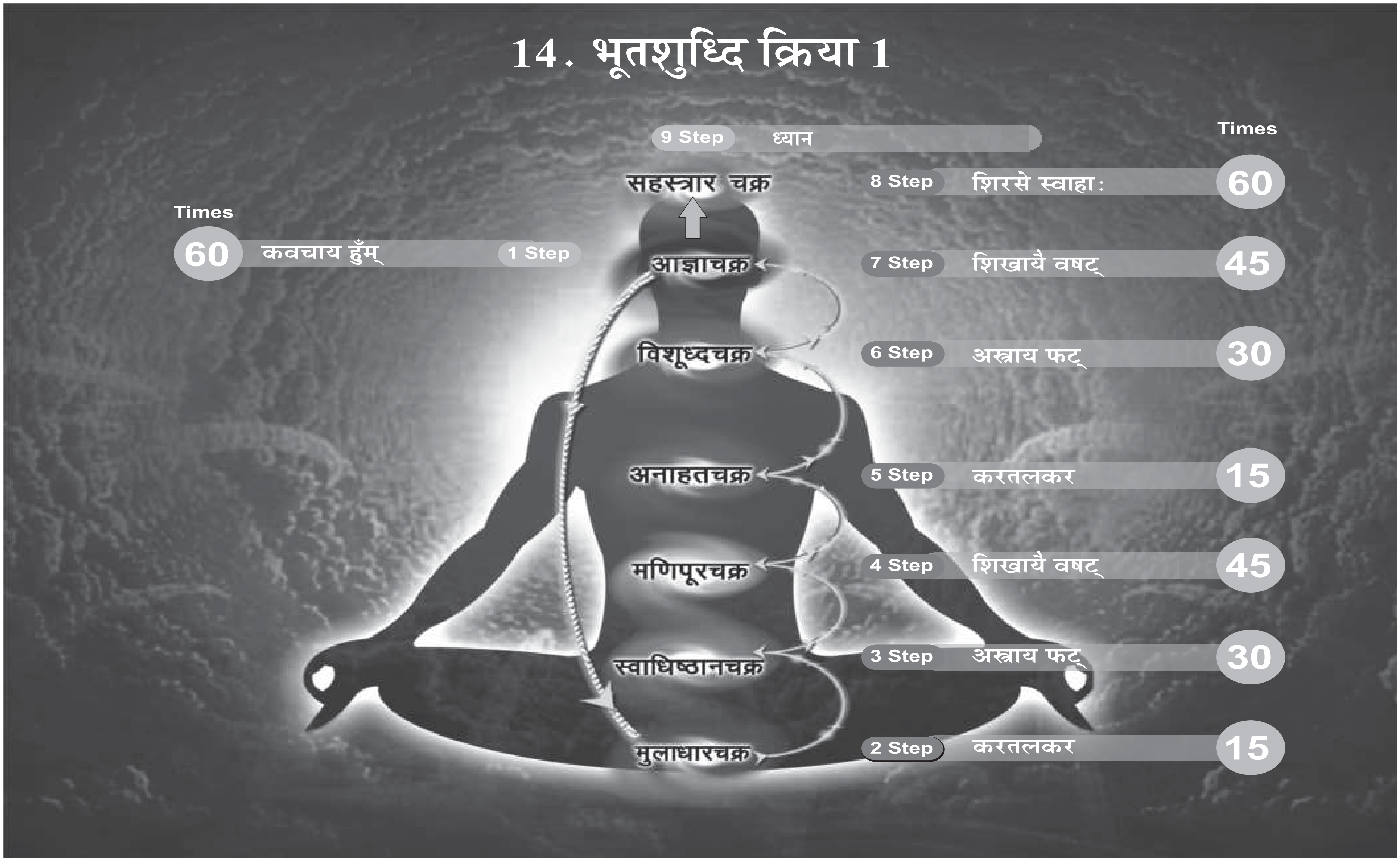
१३) आभा मण्डल विकसित होता है।

१४) ग्रन्थियों को संतुलित कर संप्रेरकों में संतुलन पैदा करती है। **(Maintain harmonal balance)**

१५) इच्छा शक्ति **(Will power)** और सकारात्मक विचारों का विकास होता है। **(Positive thinking)**

१५ दिनों तक भूतशुद्धिक्रिया करने से इसके परिणाम आने शुरु होते हैं।

14. भूतशुध्दि क्रिया 1



१. शांति गान

जय हो, जय हो, जय हो .... हिन्दराष्ट्र की जय हो।
मानवता का धर्म हिन्दराष्ट्र हो ।।धृ।।

मानवता महामानव की शान हो।
सारा विश्व ही परिवार हो ।।१।। जय हो..

परोपकार एकता प्रेम ही मानवधर्म हो।
ऐसा ही प्यारा हिन्दराष्ट्र हो ।।२।। जय हो..

प्राणियों में सद्भावना ही विश्व का कल्याण हो।
यह दिव्यता ही मानवता का गुण हो ।।३।। जय हो..

संस्कारों में ही छुपा मानवता का धर्म हो।
उसीमें ही ज्ञान, विज्ञान, महाविज्ञान हो ।।४।। जय हो..

बिन्दु में ही जन्म हो, बिन्दु में ही मृत्यु हो।
वही जाननेवाला सत् ईश्वर हो ।।५।। जय हो..